चन्दामामा
मई १९८०

DRINK
GE F R
कैम्पा का
आरेंज स्वाद.... पीजिए,
मज़ा ऐसा कि याद कीजिए
कैम्पा से ज़िंदगी में मौजबहार, इसमें अब आरेंज*स्वाद की हलचल जगाइए, कैम्पा पीजिए, पिलाइए. मौजमस्ती का रंग, मौजमस्ती का स्वाद—कैम्पा आरेंज*स्वाद. ज़िंदगी की प्यास अधूरी, कैम्पा आरेंज*स्वाद से कीजिए पूरी—इन सभी रंगारंग प्यासे लोगों की तरह...अभी.
*आर्टिफिशल फ्लेवर
Campa
Campa
Campa
कैम्पा
आरेंज* स्वाद
OBM 3083 HN

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल–पहला इनाम १५ रु.
कैमल–दूसरा इनाम १० रु.
कैमल–तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल–आश्वासन इनाम ५
कैमल–सर्टिफिकेट १०
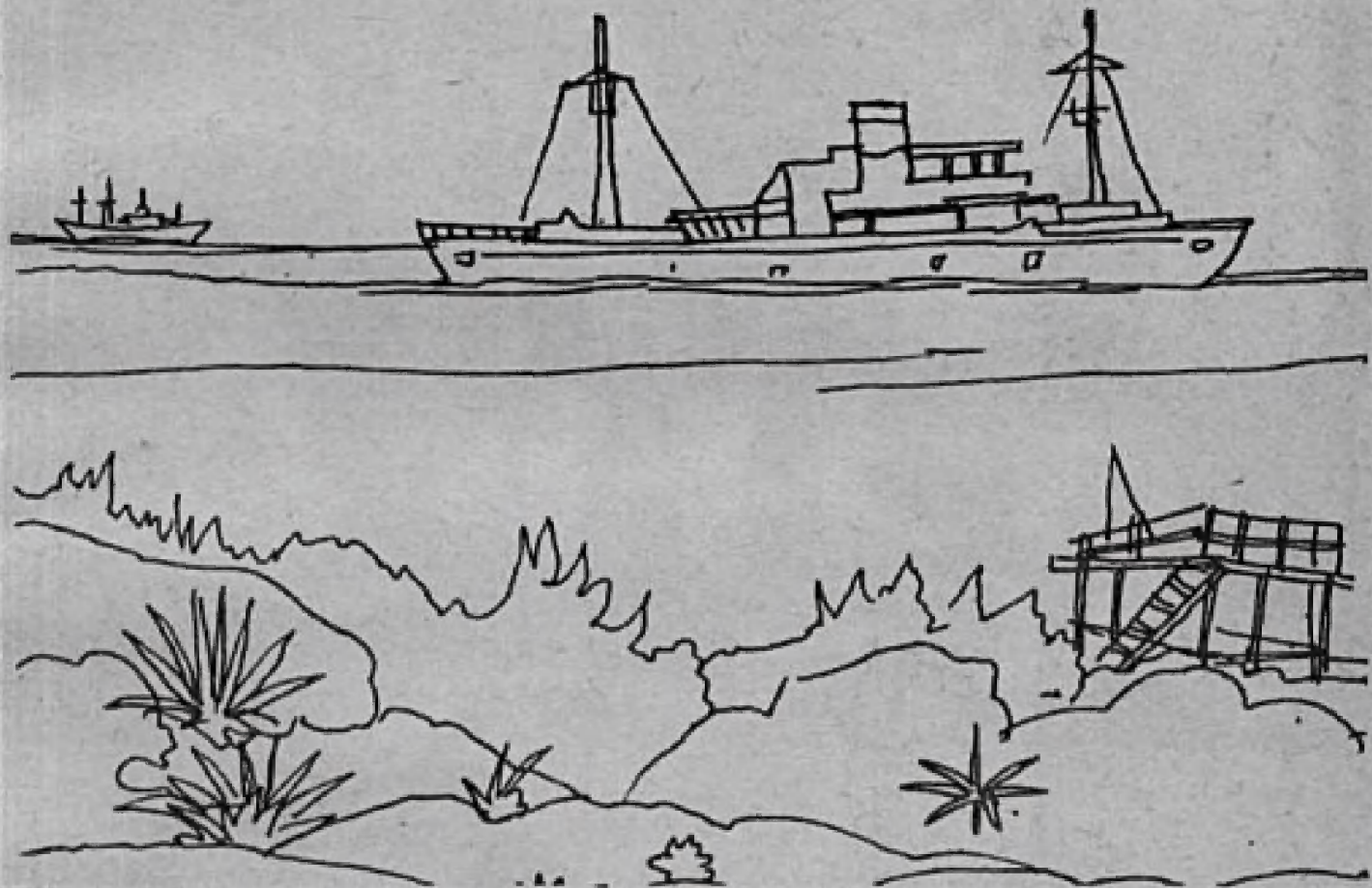
केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहें कैमल रंग भर दिजिए। अपने रंगीन प्रवेश-पत्र नीचे दिये गए पते पर भेजिए P.B. No. 9928, COLABA, Bombay-400005.

परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name.. Age..................

Address..

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

बिन्दुवाली रेखाके साथ काटिये

CONTEST NO.14

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।

चित्र भेजने की अंतिम तारीख: *31-5-1980*

चन्दामामा
जून १९८० के अंक से
धूमकेतु
जो एक अद्भुत एवं साहसपूर्ण
अपूर्व गाथा है, जिसने पच्चीस वर्ष पूर्व सभी
पाठकों के मन को मोह लिया था
हर मास पढ़िये!
अपनी प्रति एजेंट से प्राप्त कर लीजिए!
CHITRA

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "मन की बात" है। इस कहानी के द्वारा हमें यह विदित होता है कि दुनिया के प्रत्येक व्यक्ति के लिए किसी न किसी प्रकार की शक्ति की ज़रूरत होती है। दुनिया के लोग कुछ शक्तियों को दुष्ट शक्तियाँ मानते हैं तो कुछ शक्तियों को अच्छी शक्तियाँ। वास्तव में शक्तियाँ अच्छी व बुरी नहीं होतीं, यह तो उनका उपयोग करनेवालों के हाथों में निर्भर करती है।

अमर वाणी

इद मेव हि पांडित्यं, इय मेव विदर्थता
अय मेव परोधर्मः, यत अयान्नाधिको व्ययः ।।

[आमदनी से ज्यादा ख़र्च न करना ही–वही पांडित्य है; वही प्रवीणता है; वही प्रमुख कर्तव्य है।]

वर्ष : ३२ मई १९८० अंक : ९

एक प्रति : १-५० : : वार्षिक चन्दा : १८-००

श्रीकंठ माधवराव, अल्लीपुरम

प्रश्न : बिजली क्यों गिरती है? उसकी आकृति कैसी होती है? उसका कितना परिमाण होता है?

जवाब : "बिजली" को लेकर प्रायः सभी देशों में गलत फहमियाँ थीं। हमारे पूर्वजों का विश्वास था कि इन्द्र वज्रायुध का प्रहार करेंगे तब वह पृथ्वी पर विध्वंस पैदा करेगा। लोगों का विश्वास था कि वज्रायुध, बिजली की चमक, तथा मेघों के गर्जन के बीच कोई संबंध है। जब बादल गरजते हैं, तब लोगों पर बिजली न गिरे, इस ख़्याल से उससे बचने के लिए अर्जुन के नामवाले सारे श्लोक आज भी पढ़ डालते हैं। अर्जुन तो इंद्र का पुत्र है। वह इंद्र के वज्र से हमें बचा सकता है, इस संबंध में एक दंत कथा भी सुनाते हैं। पांडव जब एकचक्रपुर में अपने को ब्राह्मण बालक बताकर भिक्षाटन कर रहे थे, तब अचानक एक बिजली गिर गई। तब अर्जुन ने उसे अपने झोले में डाल लिया और सब को ख़तरे से बचाया था।

वास्तव में बादलों के गर्जन व बिजली की चमक से संबंधित "वज्र" नामक कोई पदार्थ नहीं है। बिजली की चमक अगर मेघों के बीच पैदा हो जाय तो वह हमारी हानि न करेगी। बिजली की चमक एक शक्तिशाली विद्युत प्रसार है। यदि उसका फैलाव पृथ्वी और बादलों के बीच हो जाता है तो भारी नुक़सान होता है. इस विद्युत्पात से बचने के लिए ऊँचे भवनों पर "लाइटनिंग कण्डकटर्स" (विद्युत् वाहक) का प्रबंध करते हैं। साधारण: विद्युत्पात ऊँचे भवनों तथा पेड़ों पर ही होता है।

ऐसी हालत में क्या अर्जुन के झोले में गिरनेवाली बिजली की बात कोरी कल्पना है? नहीं; हम लोग रात के निर्मल आकाश में जिन नक्षत्रों को गिरते हुए देखते हैं, वे ज्यादातर हवा में ही राख-बन जानेवाले उल्का हैं। मगर उनमें कुछ बड़े होते हैं जो वायु-घात से पूर्ण रूप से न जलकर जमीन पर गिर जाते हैं। उनमें ज्यादातार लोहा और कोयला होता है। इनका परिमाण थोड़े से ग्रामों से लेकर कुछ टन तक भी होता है। इस संसार में जहाँ-तहाँ "केटर" सरोवर हैं, वे तो कई टन वजनवाले उल्काओं के पतन से ही निर्मित हुए हैं। अचानक दी जानेवाली ख़बर को अंग्रेज़ी में "बोल्ट फम द ब्लू" (निर्मल आकाश से वज्रपात) कहते हैं, वही वज्र उल्का है।

[८२]

अतिलोभी न अत्यंत लोभी से कहा–

"यह बात सही है कि क़िस्मत के साथ देने पर अयोग्य भी फ़ायदा उठाते हैं, लेकिन मनुष्य उसी पर विश्वास करके लोभ के वशीभूत हो जाता है तो क़िस्मत बिगड़ भी सकती है। ऐसी हालत में ऐसा असहनीय दुख प्राप्त हो सकता है। तुम्हें देख मैं पूर्ण रूप से रहम खाता हूँ। अब मुझे इस प्रदेश से घर लौटना है, अनुमति दो।"

अत्यंत लोभी ने कहा–"कहा जाता है कि दुर्दिनों में दोस्त व धन मदद पहुँचाते हैं। ऐसी हालत में तुम मुझे छोड़कर क्यों चले जाना चाहते हो? लोग कहते हैं न कि विपदा में फंसे हुए दोस्त को निर्दयतापूर्वक छोड़नेवाला व्यक्ति कृतघ्न होता है और वह नरक को प्राप्त होता है।"

"मित्र के कष्टों को दूर करने की स्थिति में रहनेवाले के संबंध में यह बात लागू हो सकती है। लेकिन तुम्हारी तक़लीफ़ को कोई भी मानव दूर नहीं कर सकता। तुम्हें मुक्त करने की शक्ति मैं नहीं रखता, मैं ही क्या कोई भी नहीं रखता। यदि मैं तुम्हारे साथ ही रहूँ तो किसी प्रकार से तुम्हारा उपकार न होगा, उल्टे मुझे भी तुम्हारी पीड़ा में हाथ बंटाना पड़ेगा। तुम्हारे चेहरे की व्यथा को देखने पर मुझे भी डर लगता है कि शायद मेरी भी यही बुरी हालत न हो जाय। इसलिए मेहर्बानी करके मुझे यहां से जल्दी जाने दो।" अतिलोभी ने समझाया।

तब अत्यंत लोभी ने कहा–"अच्छी बात है, घर जाकर आराम से रहो। मेरे दुर्भाग्य का परिचय मेरे घरवालों को

मेरे लिए क़िस्मत की बात है। फिर भी इसमें थोड़ा खतरा भी है। इसलिए सावधानी बरतने की ज़रूरत है। जिस चीज़ की कामना करते हैं, उसके पाने में खतरा भी होता है, आखिर जहर मिला अमृत भी प्राण ले बैठता है न? लेकिन सच बात यह है कि बिना खतरे के धन कैसे मिल सकता है? थोड़ा-बहुत साहस किये बिना कोई भी धनी नहीं बन सकता। इस उपकार संबंधी सारी बातें गहराई से जानने की कोशिश करूँगा।" यों विचार कर उसने बाघ से पूछा–"तो कंगन कहाँ पर है?"

करा दो। इसके बाद अतिलोभी उस पर्वत प्रदेश को छोड़ फिर से मानवों की दुनिया में चला आया।

बूढ़े बाघ की कहानी

दक्षिण देश के जंगलों में एक बूढ़ा बाघ निवास करता था। एक दिन उसने एक तालाब में स्नान किया, एक हाथ में दाभ और दूसरे हाथ में स्वर्ण कंगन लेकर बैठ गया। तब उस रास्ते से चलनेवाले मुसाफ़िरों से कहने लगा–"हे यात्रियो, यह कंगण उपहार के रूप में लेते जाओ।"

पर किसी ने उसकी बातों पर ध्यान न दिया। सब अपने अपने रास्ते चले गये। आखिर एक लोभी ने सोचा–"यह तो

बाघ ने अपना पंजा आगे बढ़ाकर सोने का कंगन दिखाते हुए कहा–"लो, देखो।"

"तुम जैसे ख़ूंख्वार जानवर पर कैसे विश्वास करे?" यात्री ने पूछा।

"महाशय, मेरी कहानी सुनने पर तुम्हें खुद यक़ीन हो जाएगा। यौवन काल में मैं बड़ा पापी था। मैंने कितने मनुष्यों और जानवरों का वध किया है, इनकी कोई गिनती नहीं है। इसके परिणाम स्वरूप मेरे बाल-बच्चे और पत्नी का देहांत हो गया, सिर्फ़ मैं अकेला बच रहा। उस हालत में एक साधू ने मुझे दान-धर्म और पुण्य कार्य करने की सलाह दी। उसकी सलाह के अनुसार मैं रोज़ स्नान

करके दान देता हूँ। मैं बूढ़ा हो चला हूँ। मेरे दाढ़ और नाखून अपनी ताक़त खो बैठे हैं। तुम मुझ पर शंका न करो। पुराणों में बताया गया है कि यज्ञ, वेदाध्ययन, दान, तप, सत्यव्रत, क्षमा, सहनशीलता और लोभ का त्याग नामक आठ मार्गों के द्वारा पुण्य प्राप्त होता है। इनमें से प्रथम चार आडंबर से भरे हुए हैं। लेकिन अंतिम चार जो हैं, महात्माओं के लिए ही साध्य हैं। मैं तो निस्वार्थी हूँ। इसलिए जो इसकी माँग करते हैं, उन्हें यह स्वर्ण कंगन देने को तैयार हूँ। मगर यह अफ़वाह भी जरूर है कि बाघ को मौक़ा मिले तो मनुष्य को खाये बिना नहीं रह सकता। यह अफ़वाह जल्दी मिटाई भी नहीं जा सकती। मैंने सारे धर्मशास्त्रों का अध्ययन किया है। गरीब को जो दान दिया जाता है, वह रेगिस्तान में बरसनेवाले पानी के समान है। भूखे को खाना खिलाने के समान है। हर किसी को अपनी जान प्यारी होती है। सज्जन व्यक्ति सब को अपने ही समान मानते हैं। मानव अपने अनुभव के द्वारा ही समझ सकता है कि किस चीज़ को त्यागना चाहिए और किस चीज़ को स्वीकार करना चाहिए। कौन चीज़ अच्छी है और कौन बुरी है। तुम तो बड़े ही गरीब हो। इसलिए मैं तुम्हें यह क़ीमती कंगन देना चाहता हूँ। धन का दान तो निर्धनियों में करना है, धनियों में

नहीं; औषध रोगी के लिए होता है, स्वस्थ व्यक्ति के लिए नहीं। महर्षियों ने बताया है कि बिना फल की कामना से दिया जानेवाला दान सर्वश्रेष्ट होता है। इसलिए तुम स्नान करके इस कंगन का दान ले लो।" बाघ ने कहा।

यात्री ने बाघ की बातों पर विश्वास किया, कंगण लेने के लोभ में पड़कर नहाने के लिए तालाब में उतर पड़ा। दूसरे ही क्षण वह कमर तक के दलदल में फंसकर वहाँ से हिल न पाया।

यात्री को दलदल में फंसे देख बाघ बोला–"ओह, तुम दलदल में फंस गये हो? डरो मत! मैं तुमको बाहर खींच लेता हूँ, रुक जाओ।" ये शब्द कहते धीरे से उसके समीप पहुँचा।

इसे देख यात्री बोला–"धर्मशास्त्र और वेदों का अध्ययन करने मात्र से दुष्ट पर विश्वास नहीं करना चाहिए। जैसे कोई भी चारा डाल दे, गाय का दूध मीठा होता है, वैसे ही किसी भी कार्य का उसका भीतरी स्वभाव ही गणना में लिया जाता है, जिस व्यक्ति की इंद्रिय व बुद्धि नियंत्रण में नहीं होतीं, उसकी चेष्टाएँ भी हाथी के स्नान जैसे निरुपयोगी होती हैं। आचरण के बिना दिये जानेवाले शुष्क उपदेश अयोग्य नारी के द्वारा धारण किये जानेवाले आभूषण के समान शरीर के लिए भारी होते हैं। इस खूँख्वार जानवर पर विश्वास करके मैंने भारी गलती की। कहा जाता है कि नदियों, शस्त्रधारियों, सींगधारियों, नाखून रखनेवालों, नारियों तथा राजाओं पर विश्वास नहीं करना चाहिए। अंत में उनका अंतरंग स्वभाव ही व्यक्त होता है। आकाश में संचार करते, अंधकार तथा पापों को दूर करते, तारों के बीच अपनी सहस्त्रों किरणों के साथ परिभ्रमण करनेवाले चन्द्रमा को भी दुर्भाग्यवश राहू ग्रस लेता है। ऐसी हालत में क़िस्मत की लेखा को कौन बचा सकता है?" यों यात्री विचार कर ही रहा था, तभी बाघ ने निकट आकर उसे मारकर खा डाला।

भल्लूक मांत्रिक

[२२]

[सामंत सूर्य भूपति अपने क़िले की रक्षा करने चला गया। माया मर्कट भी क़िले की दीवार फांदकर चला गया। भल्लूक मांत्रिक अपने गुरु को ख़तरे में देख सुरंग मार्ग में प्रवेश करने जा रहा था, तब बधिक भल्लूक ने उसे रोका। मांत्रिक उसे नगर का बधिक बताते उसके सर पर मंत्र दण्ड छुआकर सुरंग के भीतर चला गया। बाद...]

भल्लूक मांत्रिक के चले जाने पर राजा जितकेतु कालीवर्मा की ओर देख बोला—"बताओ, इस वक़्त हमारा कर्तव्य क्या है? मैंने आप सब के सामने सूर्य भूपति की पुत्री को अपनी दत्तक पुत्री घोषित किया। अब माया मर्कट के गुरु मिथ्या मिश्र से उसकी रक्षा करनी है न? क्या हम लोग सैनिकों को साथ लेकर जंगल की ओर चले जायें?"

"महाराज, हम लोग अपने साथ सैनिकों को लेकर कोलाहल मचाते जंगल में प्रवेश करेंगे तो उस तांत्रिक को पहले ही पता चल जाएगा।" यों सावधान कर कालीवर्मा वहाँ से चल पड़ा।

कालीवर्मा के पीछे राक्षस उग्रदण्ड और नगर का बधिक भी चल पड़े। तब तक वहाँ पर खड़े हो ये सारे दृश्य देखनेवाले बैरागी गुरु तथा उसके शिष्य

सुरंग मार्ग की ओर इशारा करते हुए राजा जितकेतु से बोले–"महाराज, हम लोग तालाब की मेंड पर स्थित बरगद के समीप में सुरंग के मुखद्वार का पहरा देते रहेंगे। हमें आज्ञा दीजिए।" यों कहते वे लोग सुरंग के भीतर उतर पड़े।

इस बार कालीवर्मा, बधिक तथा राक्षस उग्रदण्ड भी पैदल चलकर जब जंगल में पहुँचे तब उन्हें एक जगह बहुत बड़ा भालू दिखाई दिया। वह थोड़े से कंद-मूल और फलों को जंगली लताओं से बांधकर कंधे पर डाल चल रहा था।

कालीवर्मा उसे देख बोला–"उग्रदण्ड, यह कैसा अनोखा दृश्य है?"

"इसमें आश्चर्य की क्या बात है? वह भालू उस दुष्ट तांत्रिक मिथ्या मिश्र का पालतू जानवर होगा। हम लोग चुपचाप उसका अनुसरण करते जायेंगे तो हमें उस तांत्रिक का पता चल जाएगा।" राक्षस उग्रदण्ड ने जवाब दिया।

इसके बाद वे तीनों भालू के पीछे थोड़ी दूर चले, तब उन्हें एक पेड़ के नीचे भल्लूक मांत्रिक तथा सफ़ेद दाढ़ीवाला एक दुबला-पतला वृद्ध दिखाई दिया, उसके कंठ में एक रुद्राक्ष माला पड़ी थी। सामंत उनसे बातचीत कर रहा था।

कालीवर्मा को दूर पर देखते ही भल्लूक मांत्रिक उठ खड़ा हुआ और बोला–"हे मेरे शिष्य कालीवर्मा, ये ही मेरे गुरु भल्लूकपाद हैं। सूर्य भूपति की पुत्री कांचनलता को तांत्रिक मिथ्या मिश्र क़िले से अपहरण करके ले गया है। अब तुम क्या करने जा रहे हो?"

भालू पर परसु का प्रहार करने की ताक में चलनेवाला नगर बधिक अपने परसु को झट से कंधे पर रखकर बोला–"ओह, तब तो यह भल्लूकपाद का पालतू जानवर है! बच गया है!"

इस पर भल्लूक मांत्रिक उनके समीप आकर बोला–"हाँ, अब मैं समझ गया कि मेरे गुरुजी का पालतू भालू आप लोगों को

यहाँ पर ले आया है। वह तांत्रिक मेरे गुरु को भल्लूकेश्वरी के मंदिर के सामने एक पेड़ से बांधकर उन्हें भूखा रखकर उनका वध करना चाहता है। मगर स्वामिभक्त भालू ने उनके बंधन खोलकर उनकी रक्षा की है।"

ये बातें सुनने पर वृद्ध भल्लूकपाद की ओर क्रोध भरी दृष्टि से देखते हुए उग्रदण्ड ने पूछा–"बताओ, मेरे भाई कालदण्ड कहाँ पर हैं?"

भल्लूकपाद ने निर्भयता पूर्वक एक बार अपनी रुद्राक्ष माला की ओर नज़र डाली, तब मुस्कुरा कर कहा–"यह सवाल तुम्हें मुझ से नहीं, बल्कि तांत्रिक मिथ्या मिश्र से करना होगा? वह जड़ी-बूटियों द्वारा तुम्हारे भाई को गूँगा बनाकर उसका उपयोग ऐसा कर रहा है जैसे मैं इस भल्लूक को अपने वाहन के रूप में कर रहा हूँ। अगर इस जंगल में तुम उसे पकड़ सकोगे तो तुम्हारे भाई कालदण्ड के साथ राजकुमारी कांचनलता भी तुम्हारे हाथ लग सकती है। तुम लोगों में क्या कोई ऐसा साहसी व्यक्ति भी है?"

ये बातें सुन कालीवर्मा ने अपनी तलवार की मूठ पर हाथ धरकर कहा– "वह साहस मैं करूंगा! साथ ही कांचनलता को बचाने के साथ उस तांत्रिक और तुम्हें भी मेरी तलवार की बलि चढ़ाऊँगा। मंत्र-तंत्र जाननेवाले कोई भी दुष्ट इस प्रदेश में जिंदा न रह सकेगा।"
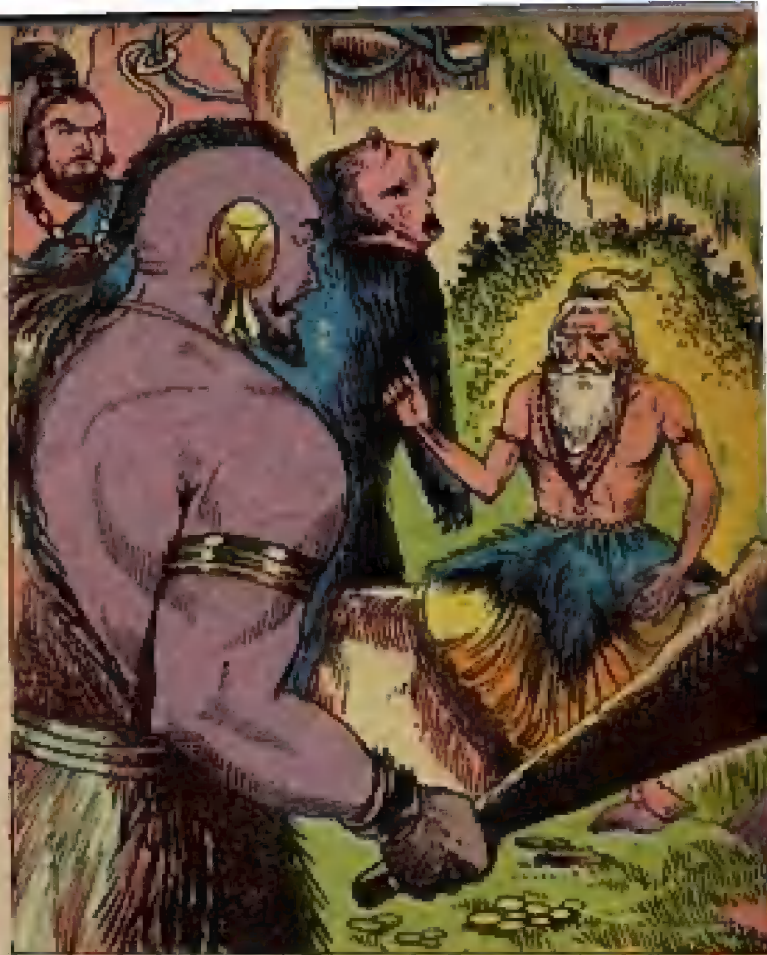
इस पर भल्लूक मांत्रिक दांत भींचते अपने मंत्रदण्ड को ऊपर उठाने को हुआ, तब सामंत सूर्य भूपति उसे रोकते हुए बोला–"कालीवर्मा, ये भल्लूकपाद और इनके शिष्य भल्लूक मांत्रिक हमारे दुश्मन नहीं हैं। शंख बजाते माया मर्कट को अपने गुरु तांत्रिक मिश्र के पास आने की चेतावनी देनेवाले उनके सेवक को बन्दी बनाने में इन लोगों ने मेरी बड़ी सहायता की है। लो, देखो, वह शंख और वह सेवक। इसको मैंने खूब सताया, फिर भी

इसने अपनें मालिक का पता नहीं दिया, इस पर उस दुष्ट को मैंने अपनी तलवार की बलि चढ़ाई है।"

कालीवर्मा ने उस शंख को दूर फेंककर कहा—"राजा सूर्य भूपति! आपको सबसे पहले आपकी पुत्री का अपहरण करनेवाले तांत्रिक मिथ्या मिश्र की बलि चढ़ानी थी। पर उसके सेवक की नहीं। अच्छी बात है। हम लोग चारों तरफ़ फैलकर उस तांत्रिक की खोज करेंगे।" यों कहते कालीवर्मा वहाँ से चल पड़ा।

भल्लूकपाद प्रशंसा पूर्वक सर हिलाते भल्लूक मांत्रिक से बोला—"हे मेरे शिष्य, तुमने हमारे लिए आवश्यक एक साहसी युवक को ढूंढ़ निकाला है। पर यहाँ की हालत हमारे अनुकूल न थी, इसलिए वह तांत्रिक हमारे हाथों से निकल गया है। अब हम उस तांत्रिक का संहार करके संतुष्ट हो जायेंगे, अब सब लोग चलिए।"

इसके बाद भल्लूकपाद भालू पर सवार हुआ, तब उसके एक तरफ़ उसका शिष्य भल्लूक मांत्रिक और दूसरी ओर राक्षस उग्रदण्ड, बधिक तथा सामंत सूर्यभूपति पैदल चलते जंगल की ओर निकल पड़े।

कालीवर्मा रास्ते में पद-चिन्हों की खोज करता रहा, एक जगह उसे साधारण मनुष्यों के पद-चिन्हों के साथ उससे दुगुने-तिगुने पैरों के निशान भी दिखाई दिये। तब उसे तक्षण तांत्रिक के साथ रहनेवाले उग्रदण्ड के भाई कालदण्ड राक्षस की याद हो आई।

कालीवर्मा यह सोचते झाड़ियों की ओट लेकर आगे बढ़ा कि समीप में ही तांत्रिक अपना निवास बनाये रहता होगा, थोड़ी दूर और आगे बढ़ने पर उसे एक बहुत बड़ा सरोवर और उसमें गिरनेवाला एक झरना दिखाई दिये। उस झरने के किनारे एक त्रिशूल जमीन में गाड़ रखा गया था। इसे देख कालीवर्मा विस्मय के साथ आगे बढ़ा। सरोवर में एक दृढ़ काय व्यक्ति खड़े हो आँखें बंद करके मंत्र जाप रहा था।

वह व्यक्ति तांत्रिक मिथ्या मिश्र था। यह बात कालीवर्मा ने झट भांप ली। तब क्रोध में आकर उच्च स्वर में बोला–"अरे, तुम्हीं हो न तांत्रिक मिथ्या मिश्र? तांत्रिक को मंत्रों से क्या मतलब है? तुम सूर्य भूपति की कन्या का अपहरण कर ले आये, वह कहाँ है?"

मंत्र पठन करनेवाले मिथ्या मिश्र ने झट से आँखें खोल कालीवर्मा की ओर परख कर देखा, तब पूछा–"तुमने मेरा नाम कैसे जान लिया? निश्चय ही तुम अक्लमंद हो! मेरे शिष्य भ्रांतिमति ने मुझे बताया कि मेरे शंख को ढोनेवाले सेवक को जंगल में किसी ने मार डाला है। वह व्यक्ति तुम तो नहीं हो?"

"यह बात मैं फिर बता दूंगा। यह बताओ, तुमने कांचनलता को कहाँ पर छिपा रखा है?" यों कहते कालीवर्मा तलवार चलाने को हुआ, तब पेड़ की डालों पर बैठा माया मर्कट 'किच' 'किच' करते चिल्ला उठा–"तांत्रिक गुरु! यही कालीवर्मा है। यह जन्मजात पराक्रमी है। इसी वक़्त इसके प्राण लेना हमारे लिए हितकर है।" ये शब्द कहते वह डाल पर से कालीवर्मा के समीप कूदने को हुआ, पर कालीवर्मा को अपनी तलवार खींचने का मौक़ा न मिला, इस कारण उसने झट से अपने समीप में स्थित त्रिशूल को माया मर्कट की ओर उठाया।

माया मर्कट ठीक उसी वक़्त डाल पर से तेज़ गति के साथ नीचे आ रहा था, वह त्रिशूल से जा टकराया, इस पर कालीवर्मा की पकड़ ढीली हो गई जिससे त्रिशूल पुनः जमीन में गड़ गया, साथ ही माया मर्कट के शरीर में त्रिशूल धंस गया, वह असहनीय पीड़ा के साथ हाथ-पैर पटकते चिल्ला उठा–"तांत्रिक गुरु की जय! आप की सेवा करने का भाग्य मुझे फिर परलोक में ही प्राप्त होगा!"

इसके बाद कालीवर्मा ने इतमीनान से अपने म्यान से तलवार खींच ली,

पड़ा—"हे युवक! सावधान रहिए! तांत्रिक जो इशारा कर रहा है, वह एक गूंगे राक्षस को!"

यह आवाज सुनकर कालीवर्मा ने बिजली की गति के साथ मुड़कर पीछे की ओर देखा। तब उग्रदण्ड राक्षस की आकृतिवाला एक और राक्षस एक युवती को अपने कंधों पर से नीचे उतारकर जंगली हाथी जैसे एक बार हुंकार कर बैठा, तब अपने पत्थरवाला गदा उठाकर कालीवर्मा की ओर बढ़ा। कालीवर्मा झट से उसके रास्ते से हट गया, तब राक्षस सरोवर के किनारे की कीचड़ में पैर फिसलने की वजह से पानी में औंधे मुँह गिर पड़ा, उसके हाथ का पत्थरवाला गदा किनारे ही छूटकर रह गया।

राक्षस इस बार और जोर से गरज उठा, अपनी कुहनियों को जमीन पर टिकाकर उठने को हुआ, तब कालीवर्मा ने उछलकर पत्थरवाले गदे को अपने हाथ में लिया और राक्षस पर उसका प्रहार किया। राक्षस भीषण ध्वनि के साथ सरोवर के किनारे अचेत-सा गिर पड़ा।

इस बीच तांत्रिक मिथ्यामिश्र भाग जाने के ख्याल से चारों ओर नजर दौड़ा रहा था, उस पर कालीवर्मा ने तीक्ष्ण दृष्टि डाली, तब राक्षस के द्वारा लाई गई

निश्चेष्ट हो खड़े तांत्रिक से बोला—"अरे कमबख्त तांत्रिक! तुम जिस भल्लूकेश्वरी की पूजा कर रहे हो, उसी के नाम में तुम्हें इस सरोवर के किनारे अपनी तलवार की बलि चढ़ाने जा रहा हूँ! लेकिन इसके पूर्व मुझे यह बता दो कि तुमने कांचनलता को कहाँ पर छिपा रखा है?"

इस पर तांत्रिक मंदहास कर उठा, तब अपने हाथ फैलाकर मुट्ठियाँ खोलते व बंद करते अपने सर को इधर-उधर हिलाने लगा। उसके इस विचित्र व्यवहार पर आश्चर्य करते हुए कालीवर्मा सरोवर में उतरने को हुआ, पर ठीक उसी समय पीछे से उसे एक नारी का कंठ सुनाई

युवती को देख पूछा–"तुम्हीं हो न सूर्यभूपति की पुत्री कांचनलता?"

युवती ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया, तब बोली–"लगता है कि तांत्रिक के दोनों सेवक मर गये हैं, पर उसे प्राणों के साथ नहीं छोड़ना चाहिए! मेरे हाथ में कोई हथियार नहीं है! तुम अपनी तलवार मुझे दे दो और गूंगे राक्षस का गदा तुम ले लो। हम दोनों इस दुष्ट तांत्रिक का शिकार खेलेंगे।"

ये बातें सुन कालीवर्मा बड़ा खुश हुआ, अपनी तलवार कांचनलता के हाथ दे दी। वह खुद पत्थरवाला गदा अपने कंधे पर रखकर सरोवर के पानी में उतरकर तांत्रिक की ओर बढ़ने लगा, तब राजा जितकेतु अपने दो सैनिकों के साथ वहाँ आ पहुँचा, उच्च स्वर में बोला–"कालीवर्मा, यह तो मगरमच्छोंवाला तालाब है! तुम तुरंत किनारे आ जाओ। इस तांत्रिक का वध करने के लिए मेरे सैनिक, नगर का बधिक और राक्षस उग्रदण्ड पीछे चले आ रहे हैं।" फिर विस्मय के साथ चतुर्दिक देखनेवाली कांचनलता के समीप आकर बोला–"बेटी, तुम मेरी दत्त पुत्री हो। इस कारण अपनी पसंद के युवक के साथ तुम्हारा विवाह करने का मुझे हक़ है! ठीक है न!"

ये बातें सुन कांचनलता लज्जा के मारे सिर झुकाकर जड़वत् खड़ी रह गई, उसी वक़्त वहाँ पर सामंत सूर्यभूपति के साथ हाथी पर सवार हो भल्लूकपाद, भल्लूक मांत्रिक, नगर का बधिक और राक्षस उग्रदण्ड भी आ पहुँचे।

सूर्यभूपति अपनी पुत्री के निकट जाकर बोला–"बेटी, मैंने कभी नहीं सोचा था कि तुम्हें प्राणों के साथ फिर से देख सकूँगा!" फिर कालीवर्मा की ओर मुड़कर बोला–"कालीवर्मा, तुम महान वीर हो! इसमें थोड़ा भी संदेह नहीं है!"

इसके बाद राजा जितकेतु हँसते हुए कालीवर्मा का हाथ पकड़कर उसे कांचनलता

के पास ले गया और बोला—"मैं अपनी दत्त पुत्री कांचनलता का विवाह इस क्षत्रिय युवक कालीवर्मा के साथ आप सब लोगों के सामने कर रहा हूँ, मेरे अनंतर यही युवक चन्द्रशिला नगर का राजा बनेगा।"

इस पर सबने हर्षनाद किये, तभी सरोवर में से एक भयंकर चीख सुनाई दी, सबने उस ओर अपनी दृष्टि दौड़ाई! देखते क्या हैं? एक बहुत बड़ा मगरमच्छ तांत्रिक मिथ्यामिश्र को पकड़ चुका है और तांत्रिक उससे बचने के लिए खींचा-तानी कर रहा है! इसे देख भल्लूक मांत्रिक उत्साहपूर्वक अपने मंत्रदण्ड को ऊपर उठाकर हिलाते हुए गरज उठा—"भल्लूकपाद गुरु! अब आप ही भल्लूकेश्वरी के प्रधान पुजारी हैं! आप का दुश्मन मगरमच्छ का आहार बनने जा रहा है!"

इसके बाद मगरमच्छ तांत्रिक मिथ्यामिश्र को अपने मुँह में दबाये सरोवर के जल में डूब गया। तब राक्षस उग्रदण्ड तालाब के किनारे पहुँचा, वहाँ पर गिरे हुए कालदण्ड राक्षस को उठाकर बोला—"भैया! आज तक तुम को तंग करनेवाला वह तांत्रिक मगरमच्छ के मुँह में चला गया है। अब तुम उठ जाओ।"

इस पर राक्षस कालदण्ड झट से उठ खड़ा हुआ, अपने दोनों हाथों से कंठ पकड़कर सरोवर की ओर देखते चीखकर बोला—"मेरे छोटे भाई उग्रदण्ड! क्या वह तांत्रिक मर गया है? उसने मुझे जो जहरीली औषधियाँ खिलाईं, उनकी वजह से मैं उसके नाम से ही डरता रहा और मैं गूँगा बन गया था। मुझ जैसे बलवान राक्षस का सामना कर मुझे बेहोश बना देनेवाला वह महान वीर कहाँ है?" यों पूछते वह बड़े-बड़े डग भरते आगे बढ़ा और कालीवर्मा तथा उसकी बगल में खड़ी कांचनलता को भी उठाकर अपने कंधों पर बिठा लिया।

इस पर भल्लूक मांत्रिक के साथ सब ने परमानंदित होकर हर्ष ध्वनि की।

(समाप्त)

मन की बात

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ पर से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, यदि आप किसी अपूर्व शक्ति को प्राप्त करने के लिए लगन के साथ प्रयत्न करते हैं तो निश्चय ही आप का अभिनंदन करना होगा। क्योंकि मानवों को उत्तम मार्ग पर चलाने के लिए साम, दाम, भेद और दण्डोपाय की अपेक्षा अद्‌भुत शक्तियाँ ही ज्यादा कार्य करती हैं, इसके उदाहरण के रूप में भीमसिंह नामक व्यक्ति के द्वारा साध्य अद्‌भुत शक्ति का परिचय देता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: भीमसिंह पेशे से एक किसान था। अपने पिता की मृत्यु के बाद वह खुद खेतीबाड़ी करने लगा। एक

वेताल कथाएँ

इस हार को जो व्यक्ति धारण करता है, वह अपने सामनेवाले व्यक्ति के मन की बात समझ लेता है। सैकड़ों साल पहले दयानिधि नामक एक व्यक्ति ने यह हार एक योगी से प्राप्त कर लिया था। उस हार की महिमा से परिचित होने के बाद दयानिधि ने अत्याचार करना शुरू किया। वह किसी बहाने बड़े लोगों के पास जाता, उनके दुष्ट कार्यों से परिचित हो उन्हें प्रकट करने की धमकी देकर उन लोगों से बड़ी भारी रक़म वसूलने लगा था। आखिर यही उसका पेशा बन गया था। अंत में उसने यह जान लिया कि उसकी पत्नी भी उसके साथ दिल से प्यार नहीं करती, इस पर उसकी हत्या की, इसके बाद जिंदगी से विरक्त होकर उसने उन ताड़ पत्रों पर विस्तार के साथ वे सारी घटनाएं लिख दीं कि उसने उस हार के द्वारा किसको कैसा नुक़सान पहुंचाया है, तब उन पत्रों के साथ उस हार को भी सुरक्षित रूप में उस नांद में रखकर जमीन के भीतर गाड़ दिया है।

भीमसिंह ने पहले हार की महिमा पर सहसा विश्वास नहीं किया। पर उसे लगा कि यदि हार दूसरों के मन की बात जानने की शक्ति रखता है तो उस शक्ति के द्वारा दूसरों का उपकार ही

दिन वह बंजर भूमि को जोत रहा था, तब अचानक हल के फाल से कोई चीज टकरा गई। भीमसिंह फावड़ा लेकर मिट्टी खोदने लगा, तब उसे मालूम हुआ कि हल के फाल से टकरानेवाली चीज़ पत्थर की एक नांद है। उस नांद पर एक चट्टान ढकी हुई थी। चट्टान को हटाकर उसने देखा, नांद के भीतर एक घड़ा औंधे मुंह रखा हुआ है। उस घड़े के नीचे एक विचित्र हार और ताड़ पत्रोंवाला ग्रंथ हैं।

भीमसिंह ने गड्ढे को भर दिया। हार और ताड़ पत्रोंवाला ग्रंथ लेकर घर पहुंचा। खोलकर पढ़ा, उसमें हार के संबंध में यों लिखा हुआ था।

कर सकता है। यों विचार कर उस हार की महिमा जानने के ख्याल से उसे अपने कंठ में धारण कर कृष्णसिंह के घर पहुँचा। वास्तव में भीमसिंह कृष्णसिंह का कर्जदार था, उसका ऋण चुकाने के लिए भीमसिंह कृष्णसिंह के घर गया था।

कृष्णसिंह उस गाँव के जमीन्दार रामसिंह का छोटा भाई था। भीमसिंह जब कृष्णसिंह के घर पहुँचा, तब वह अपने बड़े भाई रामसिंह का वध कराने के प्रयत्न में था। यह बात भीमसिंह को मालूम हो गई। उसने कृष्णसिंह को समझाया–"महाशय, आप के बड़े भाई बड़े ही धर्मात्मा हैं। उनका वध कराने का यह कुविचार न मालूम आप के मन में कैसा पैदा हो गया है। कृपया आप यह विचार छोड़ दीजिए।"

भीमसिंह के मुँह से ये बातें सुन कृष्णसिंह पल भर के लिए चकित रह गया, फिर संभलकर पूछा–"क्या मैं अपने ही बड़े भाई का वध कर सकूँगा? तुम को किसने यह बात बताई है?"

"चाहे किसी ने क्यों न बताई हो, पर आप यह विचार बिलकुल छोड़ दीजिए। लीजिए, ये आप के कर्ज के रुपये।" यों समझाकर कृष्णसिंह के हाथ में रुपये दिये।

इसके बाद भीमसिंह ने जान लिया कि कृष्णसिंह भीमसिंह के पीछे दो आदमियों को भेजकर उसकी हत्या कराना चाहता है। इसलिए वह अपना रास्ता बदलकर एक झाऊ के बगीचे में पहुँचा और अंधेरे में छिप गया।

उसका वध करने के लिए कृष्णसिंह के जो दो आदमी आये, उन लोगों ने भीमसिंह को गायब होते देख सोचा कि वह झाऊ के बगीचे में घुस गया होगा। तब वे दोनों भी झाऊ के बगीचे में घुस पड़े। भीमसिंह ने उन्हें लाठी से मार गिराया और पेड़ से बांध दिया, तब जमीन्दार के पास खबर भेज दी।

कृष्णसिंह के अनुचरों को जब जमीन्दार के सिपाही पीटने लगे, तब उन दोनों ने सच्ची बात बताई कि कृष्णसिंह जमीन्दार की हत्या करने के प्रयत्न में है। यह खबर मालूम होते ही कृष्णसिंह घर से भाग गया। इसके बाद अपना उपकार करनेवाले भीमसिंह का जमीन्दार ने अच्छा सत्कार किया।

इसके बाद भीमसिंह के हार ने कई अच्छे काम किये। थोड़े दिन बाद भीमसिंह को मालूम हुआ कि जयलक्ष्मी नामक कन्या उसके साथ शादी करने की इच्छा रखती है, यह बात मालूम होने पर भीमसिंह जयलक्ष्मी के पिता से मिला, उसे मनवाकर जयलक्ष्मी के साथ शादी कर ली।

धीरे धीरे सब पर यह रहस्य प्रकट हो गया कि भीमसिंह दूसरों के मन की बात समझने की शक्ति रखता है। उसने कुछ डाकुओं के विचार पहले ही जानकर राजा के सिपाहियों को चेतावनी दी और कब-कहाँ चोरी होनेवाली है, यह खबर देकर उसने चोरों को बन्दी बनवाया।

इसके बाद सभी लोग भीमसिंह के नाम से ही घबराने लगे। सब लोग यह सोचकर डरने लगे कि न मालूम कोई बुरा विचार अपने मन में लाने से भीमसिंह को पता लग जाय! चोर, डाकू, हत्यारे वगैरह भीमसिंह के नाम से थर-थर कांपने लगे। उसका वध करना चोर, डाकुओं के लिए बायें हाथ का खेल है, पर वह यह बात भी पहले ही भांप सकता है।

मगर कोई यह नहीं जानता था कि भीमसिंह की सारी शक्ति उसके हार में है।

जल्द ही भीमसिंह की इस अनोखी ताक़त का परिचय बड़े लोगों को भी हो गया। उन लोगों ने भीमसिंह को अपने यहाँ बुलवाकर उनके बारे में अन्य लोग क्या सोचते हैं, समझ लेने का प्रयत्न किया।

वैसे भीम ने पहले सोचा था कि वह अपनी इस शक्ति के द्वारा लोगों का उपकार कर सकता है। पर उसे जल्द ही मालूम हो गया कि इसके द्वारा भयंकर

खतरा भी उपस्थित होने की संभावना है। ऊँचे ओहदों पर रहनेवाले लोग एक दूसरे का सर्वनाश चाहते हैं, ऐसी हालत में किसके मन की बात किससे कह दे?

इसके बाद भीमसिंह ने जो कुछ जाना, वे सारी बातें अपने ही मन के भीतर रखकर वह झूठी बातें बताकर उन्हें प्रसन्न रखने लगा। मंत्री, सामंत, सेनापति, दरबारी पंडित पुरोहित, वैद्य सबने मिलकर भीमसिंह को दरबार में प्रवेश कराकर उसके द्वारा यह जानना चाहा कि राजा उनके बारे में क्या सोचते हैं? यह खबर तत्काल उन्हें देते रहे। राजा से उन लोगों ने बताया कि भीमसिंह दूसरों के मन की बात भांप सकता है।

इस पर राजा ने भीमसिंह की जांच करने के ख्याल से पूछा–"भीमसिंह, बताओ, इस वक्त मैं क्या सोच रहा हूँ?"

"महाराज, आप यही विचार कर रहे हैं कि मैं आप के मन की बात समझ नहीं सकता।" भीमसिंह ने झट से जवाब दिया। इस पर राजा ने उसे अपने दरबारी नियुक्त किया। थोड़े दिन बाद राजा ने भीमसिंह को बुलवाकर पूछा–"बताओ, इस वक्त मैंने तुम्हें यहाँ पर क्यों बुला भेजा है?"

"आप मेरे जरिये रानी के बारे में जानना चाहते हैं?" भीमसिंह ने बताया।

"शाबाश! तुम महारानी के हाथ में यह पत्र दे दो, इसका उत्तर जान लो, महारानी के मन में जो बातें हैं, उन्हें भी गुप्त रूप से जानकर मुझे एकांत के समय बतला दो।" राजा ने आदेश दिया।

भीमसिंह ने पत्र ले जाकर रानी के हाथ दे दिया, रानी ने बताया–"महाराजा से कह दो कि मैंने मान लिया है।" उसमें राजा ने बस यही लिखा था कि क्या शाम को संगीत का आयोजन करूँ?"

भीमसिंह को रानी के मन का रहस्य मालूम हो गया। वह राजा से बिलकुल प्यार नहीं करती, उसके प्रेमी कई हैं।

भीमसिंह राजा के पास लौटकर बोला– "महारानी उत्तम पतिव्रता हैं।" इस पर राजा ने अपने कंठ का हार भीमसिंह को पुरस्कार के रूप में दे दिया।

उसी दिन रात को भीमसिंह ने अपने कंठ का हार आग में डाल दिया। वह हार विचित्र ढंग से जलकर भाप बन गया, पर गला नहीं। चूल्हे में उस हार की राख तक न बची थी।

उसी दिन बड़े बड़े लोगों के द्वारा प्राप्त धन को लेकर अपनी पत्नी के साथ भीमसिंह किसी दूसरे देश में चला गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा– "राजन, ऐसी अद्भुत शक्तिवाले हार को भीमसिंह ने जान-बूझकर क्यों नष्ट किया? उसके द्वारा न केवल उसका लाभ हुआ, पर देश का भी उपकार हुआ था न? उसका रहस्य आखिर भीमसिंह के अतिरिक्त कोई जानता तक न था न? ऐसी हालत में वह हमेशा उसे धारण किये रहता तो इसमें हानि ही क्या थी? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न देंगे तो आप का सिर फट जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने उत्तर दिया– "किसी भी प्रकार की शक्ति का दुरुपयोग केवल बलवान ही कर सकते हैं, दुर्बल व्यक्ति उस शक्ति से डरकर अपराध करना भले ही छोड़ दे, उनके मन की वक्रता छूटती नहीं, वैसे आचरण में भीमसिंह के हार की शक्ति ने दुर्बलों को डराया और लगा कि उस शक्ति ने उपकार ही किया है, पर उसी शक्ति ने बलवानों के मामले में भीमसिंह को सताया। पर वह दुर्बल होने के कारण अपनी शक्ति का उपयोग दूसरों के हित में न कर पाया। वैसे भीमसिंह स्वभाव से उत्तम चरित्रवाला है, ऐसे व्यक्ति को वक्र मार्गों पर चलना कठिन ही मालूम होगा। इसी वजह से उसने हार को नष्ट करके उसकी पीड़ा से छुटकारा पाया।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुन: पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

बंटवारा

मीनाक्षी अपने दो बड़े भाइयों के बीच लाड़-प्यार से पली। जब वह शादी के योग्य हुई, तब उसके भाई उचित रिश्ते की खोज करने लगे। आखिर उन्हें रामापुर का निवासी सोमशेखर पसंद आया। मीनाक्षी की शादी करने के बाद उसके भाइयों ने भी शादियाँ कर लीं।

वैसे सोमशेखर सब प्रकार से योग्य व्यक्ति था। उसके अन्दर किसी तरह की ऐब न थी। उसका व्यापार भी लाभदायक था। अच्छी खासी जमीन-जायदाद थी। ससुराल में मीनाक्षी भी सब प्रकार से संतुष्ट थी। मगर उस परिवार पर जेठानी का अधिकार चलाना उसे पसंद न आया। यों तो उसके प्रति जेठानी का व्यवहार बड़ा ही मधुर था, फिर भी मीनाक्षी उस घर पर अपना अधिकार चलाना चाहती थी।

मीनाक्षी ने अपनी यह इच्छा पति के सामने स्पष्ट प्रकट न की, सोमशेखर भी ऐसा व्यवहार करने लगा, मानो अपनी पत्नी के मन की बात समझ न पाया हो। आखिर मीनाक्षी ने कहा–"अजी, सुनिये तो, हम अपना घर अलग बसायेंगे तो बड़ा ही अच्छा होगा न?"

सोमशेखर यह बात सुनकर पहले चकित रह गया, फिर धीरे से बोला–"मुझे अच्छी तरह से सोच लेने दो।"

इसके बाद मीनाक्षी अपने पति के निर्णय का बहुत दिन तक इंतजार करती रही, लेकिन सोमशेखर भी इस मामले में मौन ही रह गया।

इस बीच सोमशेखर को अपने व्यापार के काम पर शोणपुर जाना पड़ा। अपने पति के रवाना होते वक्त मीनाक्षी ने सुझाया–"अजी, शोणपुर के रास्ते में

शकुंतला भार्गव

हमारा पीहर पड़ता है न! मेरे भाइयों के कुशल-मंगल की खबर लेते आइए।"

सोमशेखर ने अपनी पत्नी की बात मान ली। उसके लौटने पर मीनाक्षी ने अपने भाइयों के कुशल समाचार पूछा। इस पर सोमशेखर ने बताया–"तुम्हारे भाई सब तरह से मजे में हैं, लेकिन तुम्हारी भाभियों का व्यवहार ही कुछ अच्छा नहीं है।"

"क्या बात है?" मीनाक्षी ने पूछा।

"बात यह है कि तुम्हारी भाभियाँ अलगाई के लिए तुम्हारे भाइयों पर दबाव डाल रही हैं। मगर वे तो अलग होना नहीं चाहते। दोनों ने मेरी सलाह मांगी।" सोमशेखर ने कहा।

"आपने कैसी सलाह दी?" मीनाक्षी ने पूछा। "जब तुम लोगों के दिल नहीं मिलते, तब अलग घर बसाना ही अच्छा है। यही सलाह दी। और क्या कहता?" सोमशेखर ने जवाब दिया।

"वाह, आपने भी क्या कहा? कमबख्त सलाह दी?" मीनाक्षी झट कह बैठी और अपने भाइयों के अलग्योझा की बात सुनते ही वह जल्दी जल्दी डग भरते वहाँ से चली गई।

इसके थोड़े दिन बाद मीनाक्षी ने अपने अलग घर बसाने की बात याद दिलाकर पूछा–"आपने क्या निर्णय लिया?"

"निर्णय क्या करना है? तुम्हारी सलाह के अनुसार करना नहीं चाहता।" सोमशेखर ने साफ़ कह दिया।

"क्यों?" मीनाक्षी ने जोर देकर पूछा।

"क्यों कि तुमने मुझे कमबख्त सलाह दी, इसलिए?" सोमशेखर ने कहा।

"क्या मेरी सलाह आपकी नजर में कमबख्त सलाह है?" मीनाक्षी ने पूछा।

"अगर मैंने तुम्हारे भाइयों को जो सल्लाह दी, वह कमबख्त सलाह है, तो तुम भी तो मुझे वही सलाह दे रही हो न?" सोमशेखर ने उल्टा सवाल किया।

मीनाक्षी को लगा कि उसके गाल पर कस कर थप्पड़ मार दिया हो, इसलिए वह अवाक् रह गई। इसके बाद उसने फिर कभी बंटवारे की बात नहीं उठाई।

परिवर्तन

दरवाजे पर दस्तक होते सुन कर रमाबाई ने आकर किवाड़ खोला ।

तब तक खूब अंधेरा फैल चुका था । बाहर का व्यक्ति रमाबाई को ढकेलता हुआ अंदर आया, झट से किवाड़ बंद कर कठोर स्वर में बोला—"चिल्लाओगी तो तुम्हारा गला दबाऊँगा । मैं सब कुछ करने पर उतार हो गया हूँ । जेल से भागकर आया हूँ ।"

उस गली में चार आदमियों के दौड़ने की आवाज़ सुनाई दी । वे चोर का पीछा करते आनेवाले सिपाही थे ।

सिपाहियों के दूर होते ही रमाबाई ने पूछा—"जेलखाने में तुम आराम से रह सकते थे? बाहर कैसा सुख भोगने आये हो?"

चोर ने गुस्से में आकर कहा—"इससे तुम्हारा क्या मतलब है? अच्छा, बताओ, इस घर में तुम्हारे अलावा और कौन है?"

"तुम्हें डरने की कोई बात नहीं है, मैं अकेली हूँ । आधी रसोई हो गई है, क्या रसोई घर में चलोगे?" यों कहते वह युवती रसोई घर की ओर आगे बढ़ी ।

चोर उस औरत के पीछे रसोई घर में चला गया और एक पीढ़े पर जा बैठा ।

रमाबाई बैंगन काटते आँखों में आँसू भरकर अपने आँचल से पोंछने लगी ।

"अरी सुनो, मैंने तो तुम्हें कुछ नहीं कहा, तुम रोती क्यों हो?" चोर ने पूछा ।

"तुम्हें देखने पर मेरा भाई याद आता है । उसने आवेश में आकर किसी को पीटा और जेल की सजा भुगत रहा है । मगर एक दिन तुम्हारे ही जैसे जेल से भाग आया, लेकिन उस दिन से उसे थोड़ी सी भी शांति नहीं है, न उसे नींद आती है और न उसे खाना अच्छा लगता है । घर से निकलना चाहे तो डरता है ।

रामनाथ शर्मा

"रसोई बन गई, क्या खाना खाओगे?" रमाबाई ने पूछा।

चोर के मन में खाने की इच्छा तो जरूर थी, मगर उसके मन में संदेह हुआ।

"इसमें जहर मिलाया नहीं गया है। तुम्हारे सामने ही तो मैंने रसोई बनाई है।" यों कहते रमाबाई ने चोर के सामने पत्तल में चावल और तरकारियाँ परोस दीं।

चोर खाना खा रहा था। रमाबाई ने पूछा—"तुम देखने में अच्छे लगते हो, लेकिन तुम जेल में कैसे गये?"

चोर ने यों बताया—"मैं अपने माँ-बाप के बारे में कुछ नहीं जानता। एक नानी ने मुझे पाल-पोसकर बड़ा किया। मुझे लाड़-प्यार से पालने के लिए उसने काफी तकलीफ़ें उठाईं। उस नानी के मरने के बाद वास्तव में मेरी तकलीफ़ें शुरू हो गईं। मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ। मेरे गाँव में करने को कोई काम न था, इसलिए शहर में चला आया। यहाँ पर मुझे कोई भी काम देने को तैयार न हुआ। चार दिन तक भूखा रहा। आखिर भूख की पीड़ा को सह न पाया। एक व्यापारी के हाथ की थैली को खींचकर भाग खड़ा हुआ, मगर पकड़ा गया, मुझे दो महीने की सजा मिली।"

बाहर जैसी भी आवाज हो, सिपाहियों के आने की कल्पना करके डरता है। यों समझ लो कि वह पागल जैसा बन गया है। अगर वह पूरी सजा भुगत कर आ जाता तो ऐसे डर न होते। हिम्मत के साथ वह नई जिंदगी शुरू कर सकता था।

यह बात मैंने उसे बताई, पर उसने मेरी बात नहीं सुनी। दस दिन तक घर पर ही अज्ञातवास किया। दसवें दिन रात को अचानक सिपाही आ गये। भय के मारे छत से कूद पड़ा, चोट खाकर दो दिन बाद मर गया।"

चोर उस युवती पर रहम खाकर बोला—"धीरे से बोलो, कोई आ जाएगा।"

"तो फिर तुम जेल से भागकर क्यों आये हो?" रमाबाई ने पूछा।

"जेल में सब तरह की बेगारी करनी है, कपड़े धोना है; चटाई और दुपट्टे बुनने हैं, कपड़े सीना है–इसी तरह के कई काम करने हैं, ये सारे काम करने की सन्नता मुझ में नहीं है।" चोर ने कहा।

रमाबाई ने हँसकर पूछा–"तुम्हें जेल के बाहर काम नहीं मिल रहा था, इसलिए चोरी करके जेल में चले गये। वहाँ पर काम ज्यादा समझकर चोरी से भाग आये। बताओ, अब क्या करनेवाले हो?"

चोर कोई जवाब न दे पाया, उसने अपना सिर झुका लिया। इस पर रमाबाई ने फिर यों कहा–"इस घड़ी से तुम्हें नरक यातनाएँ शुरू हो जायेंगी। तुम्हें खाने व सोने की चैन न पड़ेगी। हमेशा छाया की भांति डर तुम्हारा पीछा करता रहेगा! अब सवाल यह है कि तुम जिओगे कैसे? तुम्हें नौकरी कौन देगा? जेल में कम से कम तुम्हें जो आजादी थी, वह अब बाहर तुम्हें नहीं है। तुम जेल से भाग आये जिससे तुमने जेल की अपनी सजा को खुद बढ़ा लिया। बस! ऐसा न होकर अगर तुमने जेल में रसोई बनाने, कपड़े सीने, दुपट्टा बुनने या बागवानी में कुशलता प्राप्त कर ली होती, तो जेल से रिहा होने के बाद तुम्हें आजादी के साथ स्वावलंबी बनकर जीने का कोई मार्ग मिल जाता। वहाँ पर तुम्हें सजा भोगने के साथ किसी पेशे का प्रशिक्षण भी दिया जाता है। लेकिन तुम भागकर आये, यह तुमने बड़ी बेवकूफ़ी का काम किया।"

ये बातें सुनने पर चोर की आँखें खुल गईं। उसने अपनी भूल को समझ लिया। शांत स्वर में पूछा–"गलती तो हो गई है। मगर इस गलती को कैसे सुधारे?"

"अब भी कोई ज्यादा देर नहीं हुई है सुधरने के लिए। तुम खुद जेलखाने में जाकर अपने को सौंप दो। ऐसा करने पर कोई तुम्हें दण्ड न देगा। हाँ, तुम्हारी

सजा थोड़ी बढ़ सकती है। मगर कोई काम सीखने के लिए वह समय तुम्हें काम देगा।" रमाबाई ने समझाया।

इस पर चोर खुशी में आया, बोला—"तुमने सगी बहन जैसे बड़ी अच्छी सलाह दी। मैं कभी तुम्हारा ऋण चुका नहीं सकता, अच्छा, मैं चला।" यों कहकर चोर चला गया। चोर के चले जाने के थोड़ी देर बाद फिर दर्वाजे पर दस्तक देने की आवाज हुई। इस बार आनेवाला व्यक्ति रमाबाई का पिता था।

रमाबाई ने विस्मय में आकर पूछा—"बाबूजी, आज क्यों इतनी देरी करके आये? ऐसा तो कभी न हुआ था?"

"जेलखाने से एक चोर भाग गया है। इसीलिए इतनी देरी हो गई।" रमाबाई के पिता ने जवाब दिया।

रमाबाई का पिता जेलखाने का अधिकारी था।

रमाबाई ने अपने पिता को समझाया—"आप लोग क़ैदियों के साथ जो व्यवहार करते हैं, वह बड़ा अजीब है। जेलखाने सिर्फ़ क़ैदियों को सजा देने के लिए ही नहीं, उनके भीतर मानसिक परिवर्तन लानेवाले जैसे होने चाहिए। आप के जेलखाने से जो चोर भागकर आया है, वह सीधे हमारे घर चला आया है। मैंने उस चोर के भीतर बैठे चोर को भगाया है। इसके वास्ते मैंने एक भाई की भी कल्पना की है।" इन शब्दों के साथ रमाबाई ने सारा वृत्तांत अपने पिता को कह सुनाया।

"शाबाश, तुम एक जेलखाने के अधिकारी की पुत्री कहलाये। मैं अभी देख आता हूँ कि वह जेलखाने में पहुँच गया है या नहीं!" यों कहते उठ खड़ा हुआ।

"बाबूजी, मैंने बता दिया है न? आप को इसकी चिंता करने की जरूरत नहीं है। उसके भीतर का चोर भाग गया है। आप खाना खाकर आराम से जा सकते हैं।" रमाबाई ने समझाया।
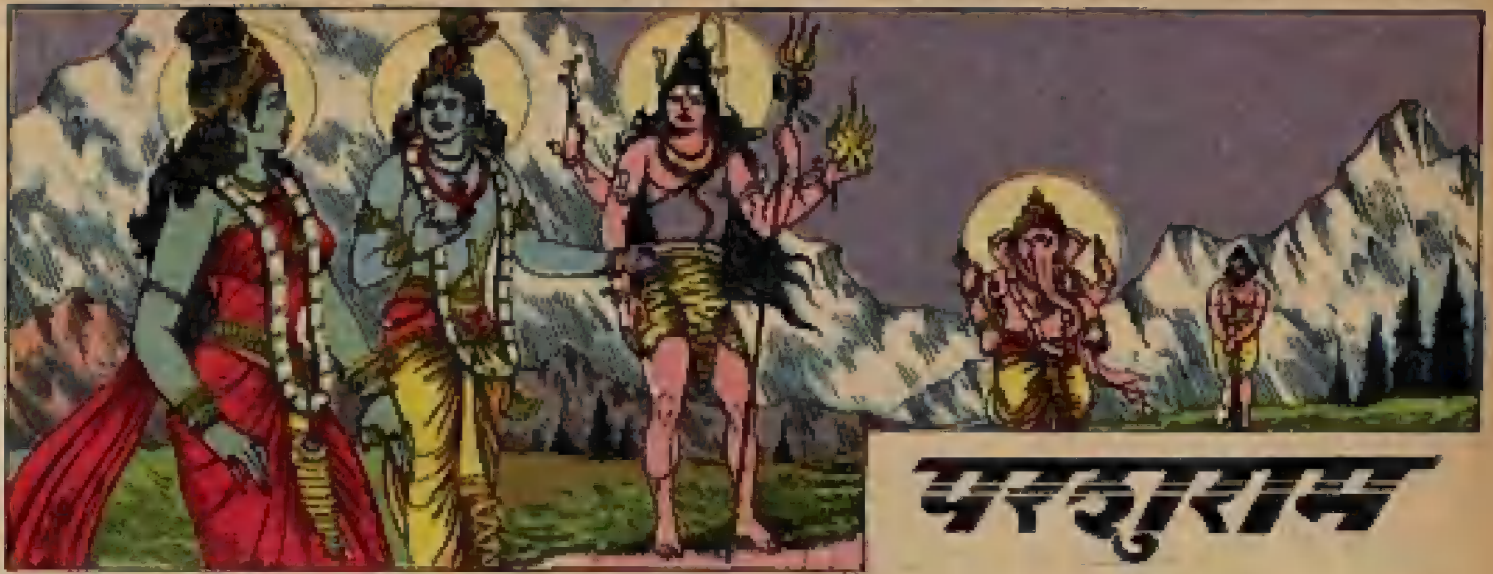
[३]

परशुराम ने कार्तवीर्य आदि क्षत्रियों का बध किया, नर्मदा में स्नान करके कैलास में पहुँचे, तब शिवजी के महल में प्रवेश कर रहे थे, तभी गणेशजी ने उन्हें रोका और अन्दर जाने नहीं दिया। थोड़ी देर तक दोनों के बीच वाद-विवाद चलता रहा, अंत में परस्पर मुष्ठि युद्ध करने लगे। विनायक ने अपनी सूंड से परशुराम को ऊपर उठाया, तो उन्हें सातों ऊर्ध्व लोक दिखाई दिये। परशुराम ने भी क्रोध में आकर अपने परशु से विनायक के एक दांत को तोड़ डाला।

यह हलचल देख शिव और पार्वती अन्दर से बाहर आये, विनायक की विपदा को अपनी आँखों से देखा।

पार्वतीजी क्रोध में आ गईं, बोलीं— "इस राम ने हमारे द्वारा कई उपकार पाये, फिर भी हमारे प्रति थोड़ी सी भी कृतज्ञता का भाव रखे बिना मेरे बेटे को यह मार बैठता है?"

शिवजी से कुछ कहते न बना और उन्होंने चुपचाप अपना सिर झुका लिया। कृष्ण ने आकर पार्वती को शांत किया और बोले—"क्या राम आप के पुत्र जैसा नहीं है? उसे माफ़ कर दीजिए।"

इसके बाद राम ने पार्वती से क्षमा माँग ली। वहाँ से राम अपने घर लौट आये। अपने पिता को क्षत्रियों का संहार करने का समाचार सुनाया। जमदग्नि ने राम को सलाह दी कि उस पाप से मुक्त होने के लिए महेन्द्र नगर में जाकर तपस्या करे।

राम ने अपने पिता के कहे अनुसार थोड़े दिन तक तप किया, इस बीच उन्हें एक बुरी खबर सुनने को मिली। वह

यह थी कि राम के पिता जमदग्नि को कार्तवीर्य के एक पुत्र ने मार डाला है, इस पर राम की माता ने अपने पति के साथ सहगमन किया है।

यह खबर सुनते ही राम को असहनीय क्रोध आया, उन्होंने शपथ की कि संसार भर के राजाओं का वध करके उनके रक्त से अपने पिता को तर्पण देंगे। राम ने कार्तवीर्य के बचे हुए पुत्रों का संहार किया, जो भी राजा दीखा, उसका वध करके कार्तवीर्य के नगर को जलाया, तभी उन्हें संतोष हुआ।

इस प्रकार समस्त हैहय वंशियों तथा अनेक राजाओं को मारने के बाद राम के भीतर परिवर्तन आया, तब तपोवन में जाकर तपस्या करने लगे। वहाँ पर एक बार विश्वामित्र का पोता परावसु आया और उसने राम की अवहेलना की— "ओह, राम! आप क्षत्रियों से डरकर क्या यहाँ पर छिप गये हैं?"

परावसु यों राम को उकसाकर संतुष्ट न रहा, साथ ही राम ने जिन क्षत्रिय वृद्धों व क्षत्रिय बालकों का वध किये बिना छोड़ दिया, उन सब को राम के विरुद्ध भड़काया, इस पर राम फिर से युद्ध के लिए सन्नद्ध हुए और इक्कीस बार क्षत्रियों का संहार किया।

इस पर भी सारे क्षत्रिय राम के हाथों में न मरे। कुछ लोग औरतों के बीच और पशुओं की रेवड़ में छिप गये।

कालांतर में उनके बच्चे हुए और वे बड़े हुए। जब कभी राम को ऐसे लोगों का पता चलता, तब तब उनका संहार करते गये। इस तरह उन्होंने इक्कीस बार क्षत्रियों का संहार करने की जो शपथ ली थी, यों उसकी पूर्ति कर ली।

राम ने जिन राजाओं का वध किया, उनके रक्त को कुरुक्षेत्र के पाँच कुंडों में भरकर अपने पिता को तर्पण किया। उन्हीं कुंडों को श्यमंतक पंचक पुकारा जाता है।

राम जब अपने पितृदेवों को तर्पण दे रहे थे, तब उन लोगों ने राम को समझाया था—"बेटा, तुम अभी तक शाप से मुक्त न हुए हो। इस वास्ते तुम यज्ञ करो।" इस पर राम महेन्द्र नगर को लौट आये और मुनियों की प्रेरणा से अश्वमेध याग शुरू किया। उस वक़्त जो मुनि याग देखने को आये थे, उन्होंने राम से विनती की कि गोकर्ण क्षेत्र समुद्र में डूबता जा रहा है। इसलिए उसे बचा ले।" तब राम ने उन्हें समझाया—"महाशयो, मैं अपने पिता के आदेशानुसार याग प्रारंभ करके यज्ञ दीक्षा में हूँ। ऐसी हालत में मैं कैसे आयुध धारण कर सकता हूँ?"

इस पर शुष्क नामक एक मुनि ने समझाया—"आप आयुध धारण कर सकते हैं, इसमें कोई दोष नहीं है।"

तब राम मुनियों की कामना की पूर्ति करने के लिए गोकर्ण क्षेत्र के समीप के

समुद्री तट पर पहुंचे और वरुण को पीछे लौट जाने का आदेश देने के लिए उन्हें पुकारा। पर वरुण न आये; राम ने फिर एक बार उन्हें पुकारा, फिर भी कोई उत्तर न मिला, तब उन्होंने आग्नेय अस्त्र का संधान किया, इस पर चारों ओर आग की लपटें फैल गईं।

समुद्र डर गया, राम की शरण में आकर बोला–"बताइये, मुझे कितनी दूर जाना है?"

इस पर राम ने अपने हाथ का परशु दूर फेंक दिया, वह दो योजन की दूरी पर जा गिरा। तब समुद्र उतनी दूर तक वापस चला गया।

परशुराम जिन दिनों में महेन्द्र नगर पर निवास करते थे, उन दिनों में कर्ण अपने को ब्राह्मण बताकर परशुराम के पास आये और उनसे ब्रह्मास्त्र की मांग की। राम ने कर्ण को उस अस्त्र का उपदेश किया।

एक दिन परशुराम कर्ण की जांघ पर अपना सर रखे सो रहे थे, तब एक कीड़ा कर्ण की जांघ को खुरेदने लगा। इस पर वहां पर घाव हो गया और घाव के भीतर से खून बहने लगा। फिर भी कर्ण यह सोचकर उस सारी पीड़ा को सहता रहा कि वह अगर अपना सिर हिला दे तो परशुराम की नींद उचट जाएगी।

मगर खून परशुराम के शरीर को छूते ही उनकी नींद उछट गई।

"यों खून के गिरते हुए भी देख तुम अगर सहन करते हो, तो तुम ब्राह्मण नहीं हो, तुमने मेरे यहां से विद्या ग्रहण करने के हेतु झूठ बोल दिया है।" इन शब्दों के साथ परशुराम ने कर्ण को जो अस्त्र दिये थे, उन्हें बेकार साबित होने का शाप दिया।

इसके बाद सारे क्षत्रियों का वध करके परशुराम ने जो राज्य प्राप्त किये थे, उन राज्यों के साथ सारी भूमि उन्होंने कश्यप को दान में दे दी। इस पर कश्यप ने परशुराम को अपनी भूमि से दूर जाने का आदेश दिया, तब परशुराम दक्षिण समुद्र को पार कर चले गये। (समाप्त)
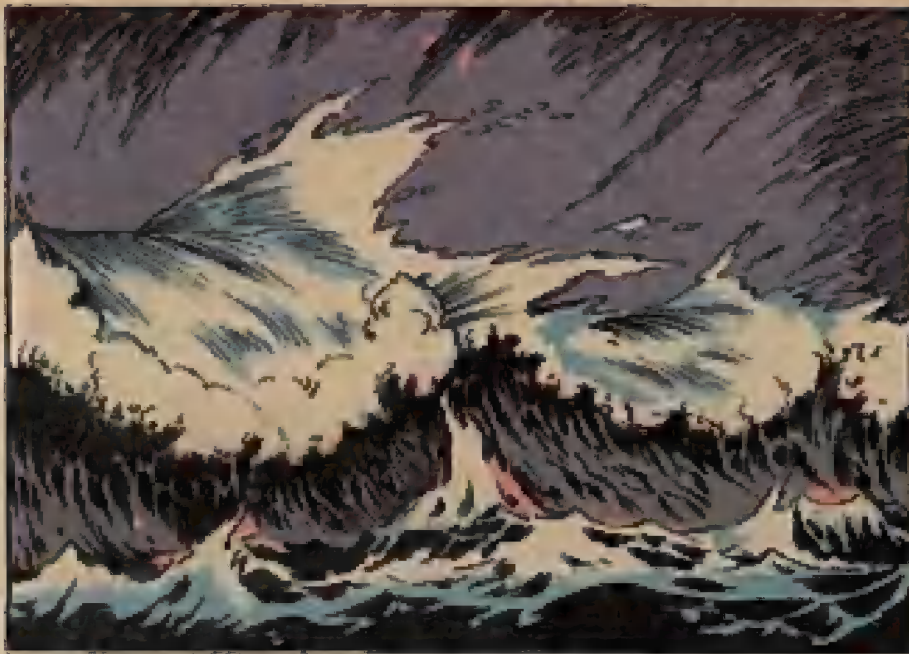
पुराणों से इतिहास तक

भारतीय सभ्यता किस समय की है ? इस सनातन भूमि पर निवास करनेवाले प्रारंभिक मानव कौन थे ? ऐसे सवालों के स्पष्ट उत्तर नहीं मिलते। कहा जाता है कि अनेक सभ्यताएं प्रलयकालों में बह गई हैं।

दीर्घ काल में महर्षियों ने जिन वेदों की रचना की, उनके आधार पर हमें यह मालूम होता है कि हमारी भी एक सभ्यता थी, जिन दिनों में ईश्वर, ज्ञान, स्वेच्छा, अमरत्व इत्यादि के बारे में यहाँ पर भी पर्याप्त अन्वेषण हुआ था।

हरप्पा, मोहंजदाडो जैसे प्रदेशों में महानगरों के भग्नावशेष और लोगों के निवास के खण्डहर प्रकट हुए हैं। ये अवशेष पांच हजार वर्ष ज्यादा पुराने हैं। उस समय में विश्व में और कहीं भी ऐसा नगर न था।

एक जमाने में भारतवासियों ने साहसिक समुद्री यात्राएँ की हैं। उन लोगों ने दूर प्रदेशों तक अपने व्यापार और संस्कृति को फैला दिया था। कुछ पंडितों का विचार है कि सभ्यता की प्रारंभिक दशा में भारतीय दक्षिण अमेरिका तक चले गये थे।

विश्व की अत्यंत प्राचीन सभ्यताओं में मेसोपोटामिया की सभ्यता भी एक है। वहाँ पर भारतीय सिक्के तथा मोहंजोदाड़ा में मेसपोटामिया के सिक्के भी उपलब्ध हुए हैं, इसके आधार पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उपर्युक्त दोनों देशों के बीच आवा-गमन चालू था।

भारत के वैज्ञानिक अन्य कई देशों में जाकर वहाँ के मेधावियों से मिले। हमें स्पष्ट रूप से यह समाचार मिला है कि एक भारतीय ई. पू. ५वीं शताब्दी में ग्रीक दार्शनिक सुकरात से मिले थे।

भारत देश में अनेक आध्यात्मिक तथा मतवाद पैदा हुए । वेद और उपनिषद आदि की रचनाएँ करनेवाले ऋषियों के बाद ई. पू. ६ वीं शती में जैन मत के संस्थापक महावीर जिन आये ।

गौतम बुद्ध भी ई. पू. ६ वीं शती में ही पैदा हुए । उन्होंने मोक्ष मार्ग का अन्वेषण करते समस्त राजसुखों को त्याग दिया, कई वर्षों तक तपस्या करके सत्य को जान लिया ।
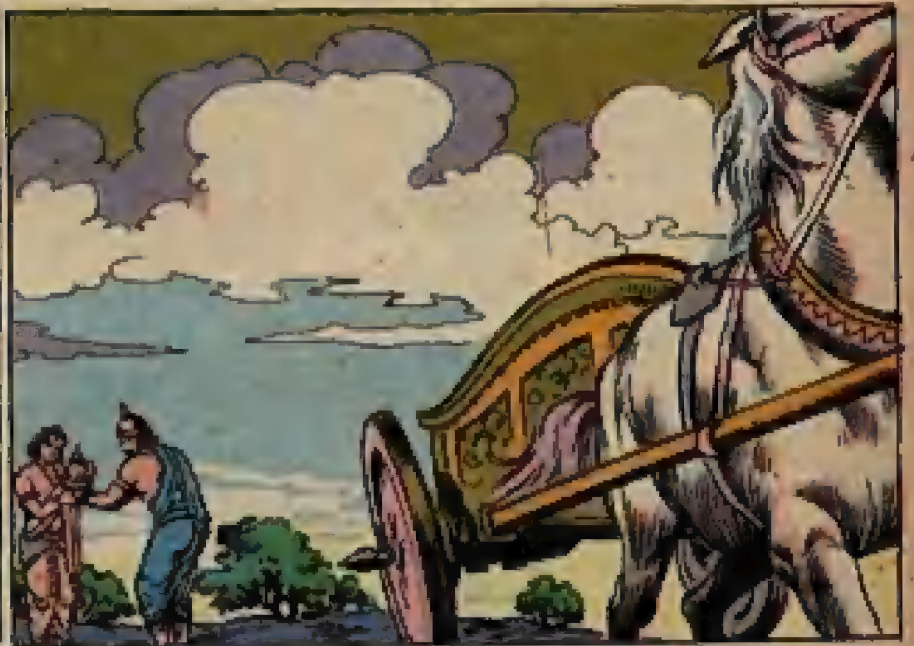
पुराणों में हम कई राजाओं को देखते हैं । ऐतिहासिक युग में नंद वंश के स्थापक महापद्मनंद ई. पू. ४ वीं शताब्दी में कलिंग से लेकर पंजाब तक एक विशाल भूभाग पर शासन करते थे ।

उन दिनों में राजाओं के शासन के बदले जनता के द्वारा चुनी गई समितियों के द्वारा हमारे देश के कतिपय प्रदेशों में शासन होता था। उन्हें गणतंत्र राज्य पुकारते थे। वैसे प्राचीन काल में भारत के कई विभाग थे, फिर भी सांस्कृतिक दृष्टि से हमारे देश में एकता थी।

भारत देश की ख्याति ने ही विदेशी राजाओं को इस देश पर आक्रमण करने को प्रेरित किया। भारत पर सबसे पहले हमला करनेवाला व्यक्ति फारस का राजा सैरस है। ई. पू. ६ वीं शताब्दी में उसने पश्चिमोत्तर दिशा में स्थित गांधार पर अधिकार कर लिया।

इसके दो शताब्दियों के बाद ग्रीस देश के निवासी सिकंदर ने फारस को जीतकर भारत में प्रवेश करने के सपने देखें। क्यों कि उस देश के एक छोटे भूभाग पर अधिकार करने के उपलक्ष्य में फारस ने गर्व का अनुभव किया था।

आधा मूल्य

रंगनाथ एक साधारण किसान था। उसके यहाँ दो एकड़ जमीन और पुराने जमाने का दो मंजिलवाला एक मकान था। रंगनाथ की बेटी शादी के योग्य हो चुकी थी, इसलिए वह अपनी बेटी का विवाह एक संपन्न परिवार के लड़के के साथ करना चाहता था।

आखिर रंगनाथ की इच्छा के अनुकूल एक रिश्ता आया। मगर वर के पिता ने तीन हजार दहेज मांगा। रंगनाथ उस रिश्ते को छोड़ना नहीं चाहता था। इसलिए अपना खेत गिरवी रखकर उधार लेना चाहा, कई लोगों से कर्ज मांगा भी, लेकिन उसका खेत उपजाऊ न था, इस वजह से कोई भी कर्ज देने तैयार न हुआ।

जैसे-तैसे उसी गाँव के महाजन शांतिलाल को यह खबर मालूम हो गई। वह जोंक जैसा आदमी था। उसने सोचा कि रंगनाथ का खेत खरीदने के लिए कोई तैयार नहीं है, इसलिए वह बड़ी आसानी से उस पर अधिकार कर सकता है।

शांतिलाल की बातें सुन रंगनाथ फूला न समाया। शांतिलाल रंगनाथ का खेत आधे दाम पर खरीदने को तैयार हुआ, उसने यह भी वचन दिया कि रंगनाथ जब भी अपना खेत खरीदना चाहे, वह उसे आधे दाम पर बेचेगा। रंगनाथ ने सोचा कि शांतिलाल की बातों में कोई दगा है, उसने सोचकर जवाब देने की बात बताई।

इसके बाद रंगनाथ गाँव के पटवारी वल्लभदास के घर पहुँचा और शांतिलाल की सारी बातें उसे सुनाईं। वल्लभदास ने शांतिलाल को अच्छा सबक़ सिखाने का निश्चय कर लिया।

उसने रंगनाथ को समझाया–" रंगनाथ, तुम्हारा खेत कम से कम आठ हजार का

राकेश जैन

होगा। उसे चार हज़ार में हड़पने की शांतिलाल ने चाल चली। तुम अपनी बेटी की शादी के बाद फिर से चार हज़ार जुटाकर अपना खेत वापस लोगे, यह बात विश्वास करने की नहीं है। इसलिए तुम मेरे कहे मुताबिक़ करोगे तो तुम्हारी बेटी की शादी भी हो जाएगी और शांतिलाल को अच्छा सबक़ भी मिल जाएगा।" इन शब्दों के साथ वल्लभ-दास ने रंगनाथ को अपनी योजना बताई।

दूसरे दिन जब रंगनाथ चबूतरे पर बैठे आराम कर रहा था, तब कहीं से शांतिलाल आ धमका। ठीक उसी वक़्त वल्लभदास भी उधर से ही आ गुजरा। "पटवारी साहब, आप तो मौक़े पर आ गये। गवाही के लिए काम देंगे।" शांतिलाल बोला।

पटवारी भी चबूतरे पर लुढ़क पड़ा, बोला–"आखिर बात क्या है?"

रंगनाथ ने गला संवारते हुए कहा– "पटवारी साहब, वैसे कोई खास बात नहीं है। शांतिलाल मेरे खेत को आधे दाम पर खरीदना चाहता है। यह भी कहता है कि जब मैं फिर से आधा दाम दूंगा, तब मेरा खेत मुझे वापस लौटा देगा। मुझे तो इस वक़्त रुपयों की सख्त जरूरत है। इसलिए इसी शर्त पर बीस हज़ार मूल्य के मेरे मकान को शांतिलाल के हाथ में बेचना चाहता हूं। क्यों शांतिलालजी, मैं ठीक कहता हूं न?"

शांतिलाल को लगा कि उसकी दसों उंगलियाँ घी में हैं। रंगनाथ चाहे दस बार पुनर्जन्म ले तब भी वह दस हज़ार चुका कर उसका मकान वापस नहीं ले सकता। ऐसी हालत में बीस हज़ार मूल्य का मकान दस हज़ार में ही उसके हाथ लग जाएगा।

इसके बाद रंगनाथ ने अपने मकान को आधे मूल्य पर याने दस हज़ार में शांतिलाल के हाथ बेचने तथा उसे वह जब भी चाहे उसे आधे मूल्य पर खरीदने की शर्त पर पटवारी के द्वारा इकरारनामा लिखवाया, उस पर चार-पांच बुजुर्गों के दस्तखत करवाये, तब शांतिलाल ने सबके सामने रंगनाथ को दस हज़ार रुपये दे दिये। उस पर पटवारी ने भी हस्ताक्षर करके वह कागज़ अपने पास रख लिया।

इसके बाद रंगनाथ ने अपनी बेटी की शादी पक्का करके रिश्तेदारों और मित्रों के नाम न्यौते भेज दिये। जब मुहूर्त निकट आया, तब शांतिलाल छे लोगों को साथ ले आ पहुँचा और रंगनाथ के साथ झगड़ा करने पर उतारू हो गया-"तुमने यह मकान मुझे बेच दिया है। इसलिए इसमें तुम अपनी बेटी की शादी नहीं कर सकते। चाहे तो तुम मेरे रुपये लौटाकर अपना घर वापस ले लो।"

रंगनाथ पहले से ही जानता था कि ऐसा होनेवाला है, उसने सामने बैठे पटवारी की ओर देखा। पटवारी ने इस

तरह इशारा किया, जिसका अर्थ था कि तुम मेरे कहे मुताबिक़ करो।

तब रंगनाथ उठकर घर के अन्दर चला गया, पांच हज़ार रुपये लाकर शांतिलाल के हाथ में रखकर बोला—"ये तुम्हारे रुपये ले लीजिए। मैंने तुमसे यह मकान फिर से खरीद लिया है। अब यह मकान मेरा है। तुम मेहमान बनकर आये हो, इसलिए वर-वधू पर अक्षत डालकर आशीर्वाद दो और भोजन करके तब चले जाओ।"

ये बातें सुन शांतिलाल ने कहा—"हे रंगनाथ, तुम मेरा मजाक़ उड़ाना चाहते हो? पांच हज़ार देने से कैसे काम चलेगा? और पांच हज़ार दे दो। क्यों पटवारी साहब, इसका आप क्या जवाब देते हैं?"

"मैं क्या जवाब दूं? तुम जो कहते हो, उसे गलत बताता हूं। इकरारनामे में जो कुछ लिखा है, वह अक्षरशः पालन हो गया है।" अपनी जेब में से कागज़ निकालकर पटवारी ने कहा।

"अक्षरशः पालन हो गया है? यह कैसे? इन सबके सामने साबित कर दो।" शांतिलाल ने कहा।

"तुम सावधानी से सुन लो। रंगनाथ ने अपने बीस हज़ार मूल्य के मकान को तुम्हें आधे दाम पर याने दस हज़ार में बेच दिया है। याने तुमने दस हज़ार में खरीदा है। ऐसी हालत में रंगनाथ आधा मूल्य देकर उसे खरीद ले तो तुम्हें आपत्ति क्या है? तुमने इस शर्त को मानकर हस्ताक्षर भी कर दिया है। इसीलिए रंगनाथ मकान के आज के मूल्य के आधे दाम पर याने पांच हज़ार देकर फिर से खरीद लिया है, ऐसी हालत में तुम कैसे आपत्ति उठा सकते हो? अब इस मकान पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है।" पटवारी ने कहा।

रंगनाथ के मकान को शांतिलाल ने सस्ते में हड़पना चाहा, पर उसका उल्टा परिणाम हो गया। इसके बाद शांतिलाल ने फिर किसी को भी धोखा देने का कभी प्रयत्न नहीं किया।

विश्वास

इमाम बुखारी नामक एक सज्जन व्यक्ति एक बार जहाज में यात्रा कर रहा था। जहाज के मालिक के साथ बहुत-से यात्री भी उसे अच्छी तरह से जानते व पहचानते थे। कुछ यात्रियों ने उसका परिचय भी प्राप्त किया, उनमें से एक यात्री ने इमाम बुखारी के पास एक हजार दीनार देखे और उन्हें हड़पने की सोची। मगर चोरी करने से वह पकड़ा जाएगा।

उसने कोई उपाय सोचा और जहाज के मालिक से फ़रियाद की–"जनाब, मेरे एक हजार दीनार खो गये हैं। किसी ने चोरी की है।" इस पर जहाज के मालिक ने सभी यात्रियों की तलाशी ली, पर इमाम बुखारी की तलाशी न ली।

इस पर यात्री ने गुप्त रूप से इमाम बुखारी की भी तलाशी लेने की सलाह जहाज के मालिक को दी; पर जहाज के मालिक ने साफ कह दिया कि उनकी तलाशी लेने की जरूरत नहीं है, लेकिन इमाम बुखारी ने अपने भी माल-असबाब की तलाशी लेने पर जोर दिया, लेकिन उनके पास दीनार नहीं मिले।

यात्री से रहा नहीं गया, उसने इमाम से ही पूछा–"आपने अपने एक हजार दीनार आखिर क्या किये?"

"समुद्र में फेंक दिया। वे दीनार अगर मेरे पास दिखाई दे तो क्या कोई आइंदा मुझ पर विश्वास करेगा? मैं धन से ज्यादा विश्वास को महत्व देता हूँ।" इमाम बुखारी ने कहा।

पिशाचों का संदेह

दो छोटे पिशाचों ने एक बार यह इरादा किया कि थोड़े दिन मनुष्यों के बीच जाकर अपना समय काटें। दोनों मानवों का रूप धरकर एक गाँव में पहुँचे। सीमा पर उन्हें एक किसान दिखाई दिया।

पिशाचों ने किसान से विनयपूर्वक निवेदन किया—"महाशय, आप के घर में हमें कोई काम दीजिए, हम ईमानदारी से करेंगे।" वास्तव में वे दोनों पिशाच काम के बहाने किसान के घर में प्रवेश करके उसे तंग करना चाहते थे।

किसान ने पिशाचों से पूछा—"देखो भाई, आजकल बैलों का दाम चढ़ गया है, मेरे बैलों को चोर हांक ले गये हैं। तुम दोनों को हल से बांध दूँ तो क्या खेत जोत सकते हो?"

"क्या कहीं मनुष्य भी खेत जोतते हैं?" पिशाचों ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"इसमें आश्चर्य करने की क्या बात है? बैलों से मनुष्य ही सस्ते हैं? मैंने अपने खेत में अब तक दो हल चलाने का इंतजाम कर रखा है। तुम लोग मान जाये तो तीसरे हल का भी प्रबंध किये देता हूँ।" किसान ने जवाब दिया।

पिशाचों ने खेत में जाकर देखा, वहाँ पर पहले से ही चार आदमी दो हलों से जुते हुए हैं। उनकी हालत पर सचमुच पिशाचों को दया आई। पर यह तक़लीफ़ कैसी होती है, जानने के ख्याल से पिशाचों ने अपने को तीसरे हल से जुतवाया और थोड़ी देर तक खेत जोता। जल्द ही उन्हें मालूम हुआ कि किसान कैसा अत्याचारी है। वास्तव में पिशाचों ने मनुष्य का जो शरीर धारण किया था, उस मेहनत से थक गये। तिस पर किसान ने उन्हें जो मजदूरी दी, वह बहुत ही थोड़ी थी।

"वसुंधरा"

इसके बाद पिशाच वहाँ से चल दिये; तब एक तेली के यहाँ पहुँचकर काम मांगा। तेली ने फिर उन्हें अंधेरी कोठी में ले जाकर समझाया—"सुनो, तुम्हें इस कोठी में रहते हुए दिन भर इन फलों से तेल निकालना होगा।"

"यह तेल किसलिए? यह तो जहर के बराबर है न?" पिशाचों ने पूछा।

"अरे, तुम लोग यह भी नहीं जानते? तिल के तेल में मिलाने के लिए, समझें!" तेली ने कहा।

"इसके द्वारा लोगों की जान को खतरा पैदा हो सकता है न?" पिशाचों ने पूछा।

"मैं मिलावटवाला तेल सस्ते दाम पर बेचता हूँ और शुद्ध तेल ज्यादा दाम पर! सस्ते दामवाले तेल से अगर लोगों की तबीयत खराब हो जाय तो मैं क्या कर सकता हूँ? सिर्फ़ धन से मेरा मतलब है।" व्यापारी ने साफ़ कह दिया।

पिशाचों को अच्छी तरह से मालूम हो गया कि गरीब लोग सस्ते में मिलावटवाला तेल खरीद कर बीमारियाँ मोल रहे हैं। इसके बाद पिशाचों ने तेली से स्पष्ट कह दिया—"हमें तो यह काम पसंद नहीं आया!"

"अबे, यह बात कहकर तुम लोग मेरा रहस्य जानने के बाद यहाँ से बाहर कैसे जा सकते हैं? खबरदार! याद रखो कि तुम दोनों प्राणों के साथ यहाँ से बाहर नहीं जा सकते?" व्यापारी ने धमकी दी।
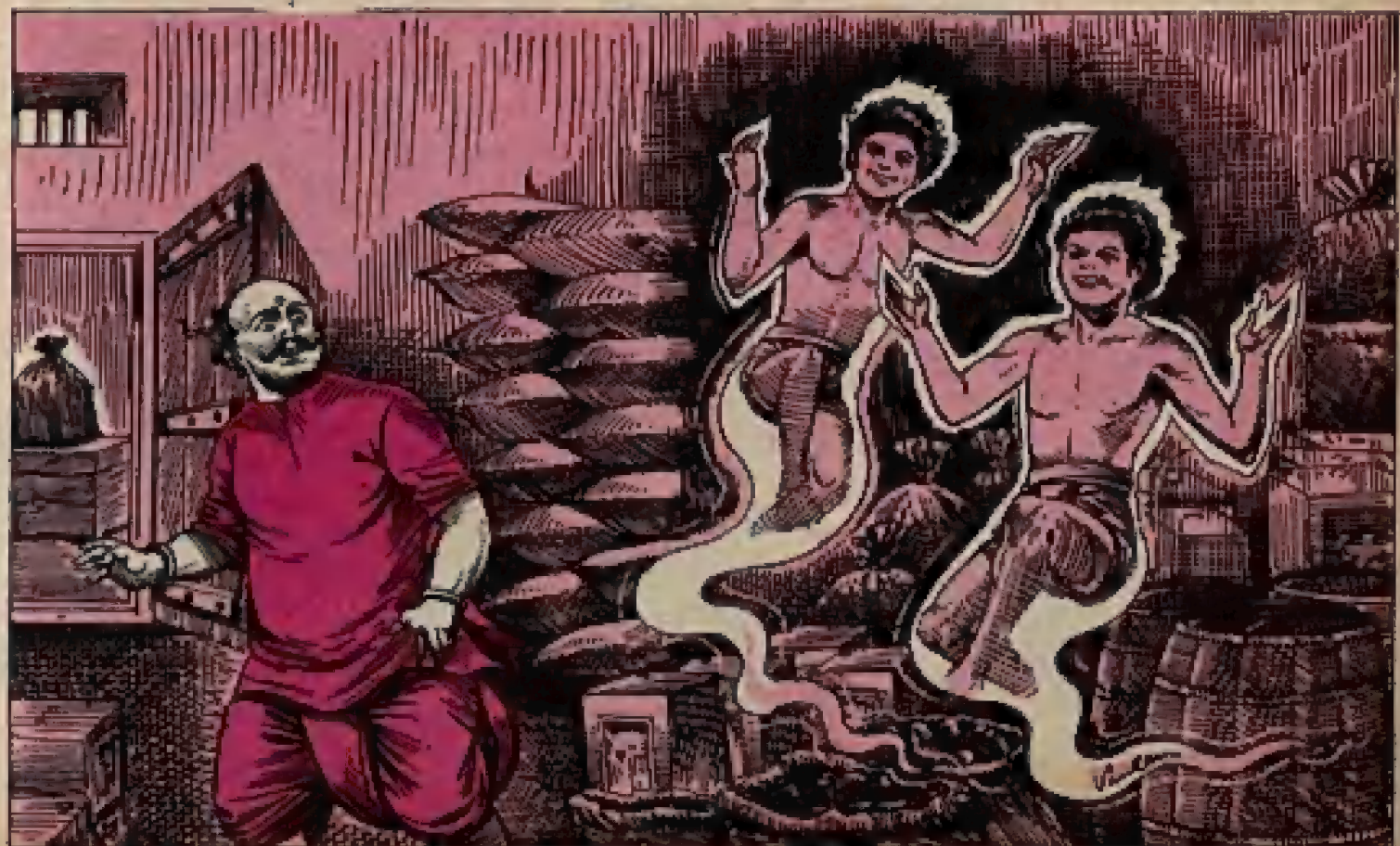
"ओह, ऐसी बात है।" यों कहकर दोनों पिशाच वहाँ से गायब हो गये।

इसके बाद वे पिशाच उस देश के राजा के पास पहुँचे। उस वक़्त राजा अपने सेनापति को डांट रहे थे–"लोग अगर लगान देने से इनकार कर दे तो उन्हें कारागार में डाल कर कोड़े लगा दो। जबर्दस्ती उनके घरों में घुसकर लगान वसूल करो।"

इस पर दोनों पिशाच सिपाहियों के वेष में वहाँ पर उपस्थित हुए। उन्हें देखते ही सेनापति ने कहा–"हाँ, तुमने राजा की आज्ञा सुन ली है न? अब जाओ।"

पिशाच जब वहाँ से निकलने को हुए तब राजा यह कहकर वहाँ से चले गये कि राजनर्तकी के नृत्य देखने का वक़्त हो गया है। इसके बाद पिशाच कई जगह गये पर कहीं भी वे ज्यादा देर ठहर न पाये। आखिर वे निराश हो अपने समाज में चले गये।

इस पर एक बड़े पिशाच ने उनसे पूछा–"तुम दोनों इतनी जल्दी कैसे लौट आये? मैंने सोचा था कि बहुत समय तक तुम लोग नहीं लौटोगे! बात क्या है?"

"वैसे कोई आश्चर्य की बात नहीं है। मगर मनुष्यों में ज्यादातर लोग बहुत ही गरीब हैं; भोले हैं। इसके पहले ही कुछ पिशाच उनके बीच पहुँच चुके हैं, पर मनुष्यों का रूप धरकर उन्हें नाना प्रकार से सता रहे हैं। इसलिए हम जैसे छोटे पिशाचों को कुछ नटखटपन करने का मौका तक नहीं मिला। यह सोचकर हम लौट आये।" पिशाचों ने समझाया।

इस पर बड़े पिशाच ने मुस्कुराकर कहा–"मनुष्यों को सतानेवाले प्राणी पिशाच नहीं, मनुष्य ही हैं! अनुभव हीनता के कारण तुम लोग गलत समझते हो।"

यह बात मालूम होने पर छोटे पिशाच आश्चर्य में आ गये कि मनुष्यों के भीतर पिशाचों को भी मात करनेवाले मनुष्य भी होते हैं।

असली दाँव

मंगल और कमल नामक दो व्यक्ति राजा के पास पहुँचे और न्याय करने की प्रार्थना की।

बात यह है कि दोनों ने दाँव लगाया। कमल ने दाँव की रक़म सौ बताया तो मंगल ने दो सौ। लेकिन उस दाँव में मंगल हार गया और दो सौ के बदले दो सिक्के ही दिये। राजा के कैफ़ियत तलब करने पर मंगल ने बताया–"महाराज, कमल ने सौ बताया तो मैंने गुस्से में आकर दो सौ कहा। पर मैंने यह नहीं कहा कि दो सौ सिक्के दूंगा, मेरे पास दस सिक्के भी नहीं है, ऐसी हालत में भला मैं कैसे दो सौ सिक्कों का दाँव लगा सकता हूँ ? मेरा उद्देश्य दो सौ कौडियाँ था।"

इस पर राजा ने मंगल की अक्लमंदी पर खुश हो कमल को दो सौ सिक्के दिये और मंगल को अपने दरबार में नौकरी दी। दूसरे दिन वे दोनों फिर न्याय पाने के वास्ते दरबार में पहुँचे। उनकी शिकायत थी कि पिछले दिन दोनों ने दाँव लगाकर थोड़ा धन कमाया है, यह धन मंगल की अक्लमंदी की वजह से ही जीता गया था, फिर भी मंगल उसको पूरी रक़म न लेकर कमल के साथ आधा-आधा बांट लेना चाहता है।

राजा ने समझ लिया कि उनके द्वारा प्राप्त धन को लेकर ही दोनों झगड़ रहे हैं, इस पर कमल की ईमानदारी पर खुश होकर राजा ने उसे भी नौकरी देकर पूछा– "तुम दोनों ने किस वास्ते दाँव लगाया था ?" दोनों ने पहला दाँव जो लगाया था, वह यह कि मंगल राज-दरबार में नौकरी पायेगा और दूसरा दाँव कमल को भी दिलायेगा।
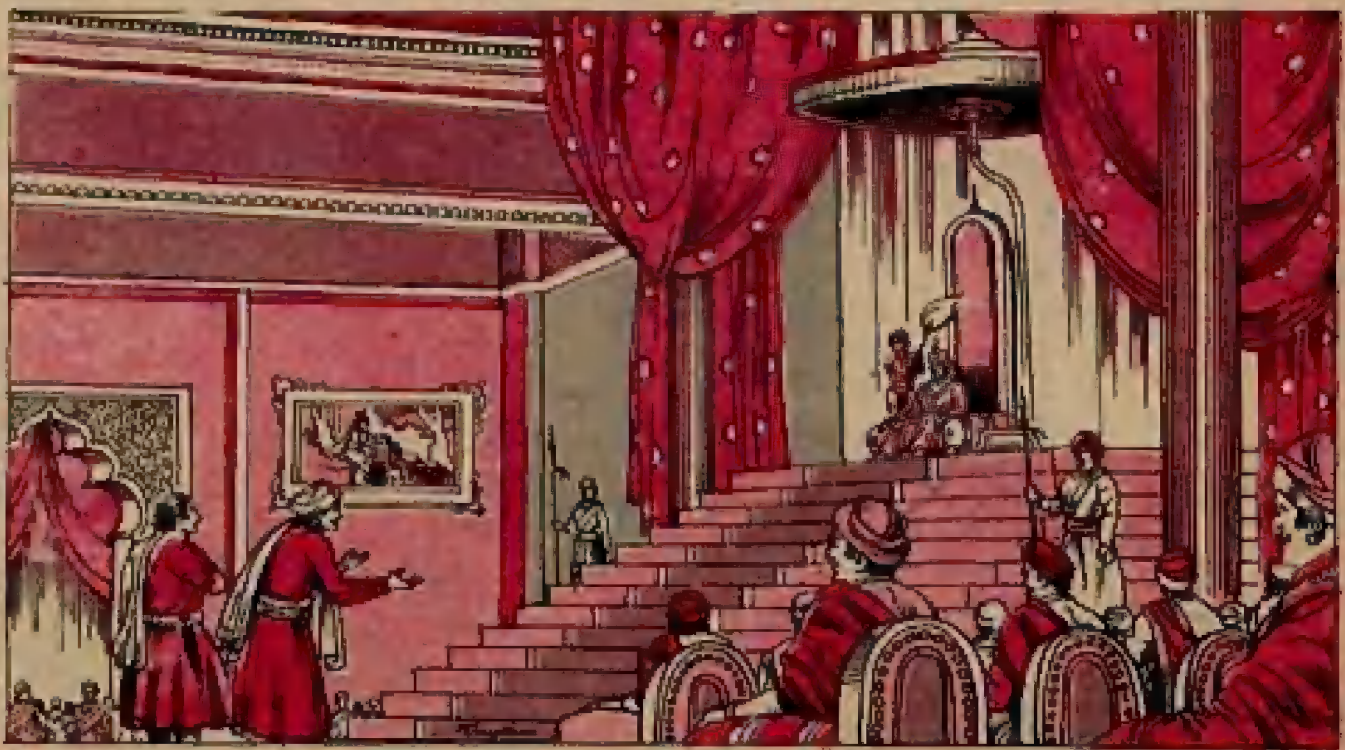
ज्ञानोदय

बहुत दिन पहले की बात है। रामानंद नामक स्वामीजी भगवद्गीता पर अद्भुत भाषण देते, और उदाहरणों के साथ कथा-वाचन भी करते थे। उनके भाषण सुनने के लिए आनेवाले भक्त स्वामीजी को सोने के आभूषणों के साथ अच्छे-अच्छे उपहार भी दिया करते थे। उनका विचार था, भक्तों से प्राप्त धन से धर्मशालाएँ बनाकर गरीबों की मदद करनी चाहिए! इस आशय की पूर्ति के लिए वे गाँवों का संचार करते धन वसूलने लगे थे। रामानंदजी के साथ आदित्य नामक एक शिष्य भी सदा रहा करता था।

एक दिन गुरु और शिष्य किसी गाँव को जा रहे थे, तब आदित्य ने अपने गुरु से पूछा—"गुरुदेव! महाभारत युद्ध में वास्तव में युद्ध करनेवाले और विजय प्राप्त करनेवाले व्यक्ति अर्जुन ही हैं न? श्रीकृष्ण ने जो कुछ किया, केवल सलाह देना मात्र था। ऐसी हालत में अर्जुन से कहीं अधिक यश श्रीकृष्ण को क्यों प्राप्त हुआ? तिस पर भी देवता का अंश लिये श्रीकृष्ण के द्वारा अनेक संदर्भों में कुचक्र करना, अर्जुन और भीम के द्वारा अधर्म युद्ध कराना ये सब पढ़ने पर मेरे मन से भगवदगीता और पुराणों के प्रति आदर का भाव घटता जा रहा है! इस संबंध में आप कृपया मेरी शंका का निवारण कीजिए।"

अपने शिष्य की यह शंका सुनकर रामानंदजी हंसकर बोले—"बेटा, मौक़ा मिलने पर तुम्हारी शंका का समाधान अपने आप मिल जाएगा।"

इसके बाद शीघ्र ही वे दोनों एक जंगल में पहुँचे। गुरुजी ने आदित्य को पेड़ पर चढ़कर एक लंबी डाल तोड़ लाने

जानकी प्रसाद

का आदेश दिया। आदित्य एक डाल तोड़ लाया, उसकी टहनियाँ हटाकर अच्छी लाठी बनाई और उसे हाथ में लिया।

इसके बाद वे लोग थोड़ी ही दूर आगे बढ़े थे कि पेड़ की ओट में से अचानक एक डाकू उनके आगे आ खड़ा हुआ, अपने हाथ की बंदूक का निशाना बनाकर धमकी दी–"तुम लोग चुपचाप अपना सारा धन मेरे हाथ सौंप दो, वरना तुम्हें गोली से उड़ा दूँगा।"

अप्रत्याचित घटी इस घटना को देख आदित्य डर गया और कंपित स्वर में बोला–"गुरुदेव, आप धन की थैली इस कम बख्त के हाथ सौंपकर अपने प्राण बचा लीजिएगा।"

जब चोर को निश्चित रूप से मालूम हुआ कि उनके पास धन है, वह और उत्तेजित हो उठा। इस पर रामानंदजी ने चोर से कहा–"भाई, मेरे पास जो धन है, वह गरीबों की मदद करने के वास्ते इकट्ठा किया गया धन है। इसकी मांग करना तुम्हारे लिए उचित नहीं है।"

फिर क्या था, चोर ने स्वामीजी पर झपट कर उनके हाथ की धन की थैली खींच ली, तब कहा–"मैं भी गरीब हूँ। आपका धन पाने का मैं भी अधिकारी हूँ।" यों कहकर वह धन की थैली के साथ आगे बढ़ने को हुआ।

स्वामीजी ने व्यथित होकर कहा–"भाई, सुनो! मैंने जिन्दगी भर प्रयत्न

करके जो धन इकट्ठा किया, उसे खोकर अब मेरा जीवित रहना बेकार है, तुम यह बंदूक़ चलाकर मेरी जान ले लो ।"

स्वामीजी की ये बातें सुन डाकू खिलखिलाकर हंस पड़ा और बोला– "स्वामीजी, यह बंदूक़ दगनेवाली नहीं है, यह तो काठ की बंदूक़ है, नकली है ।"

तब स्वामीजी बोले–"मेरा संदेह सच निकला। काठ की बंदूक़ को लेकर वह हमारा क्या बिगाड़ सकता है? आदित्य, देखते क्या हो? उस पर लाठी चला दो न?"

बस, अपने गुरुदेव की प्रेरणा से आदित्य वीर केसरी बन बैठा और डाकू की पीठ पर लाठी का प्रहार किया । फिर डाकू को एक पेड़ से बांध दिया और धन की थैली वापस ले ली ।

इसके बाद गुरु और शिष्य ने अपनी यात्रा चालू की । रास्ते में स्वामीजी ने अपने शिष्य को समझाया–"हे मेरे शिष्य! महाभारत का युद्ध अर्जुन ने जरूर किया है, पर श्रीकृष्ण ने इसका तंत्र बताया है । इसी प्रकार डाकू पर लाठी चलाकर तुमने हराया, पर जंगल में प्रवेश करनेवाले के हाथ लाठी रखने की सलाह मैंने दी । और उसका उपयोग कब करना चाहिए, यह भी मैंने ही बताया । बात यह है कि डाकू के हाथ की बंदूक़ को लकड़ी के जैसे हिलते देख मेरे मन में संदेह पैदा हुआ कि कहीं वह काठ की बंदूक़ तो नहीं है? तब यह बात डाकू के मुंह से ही कहलाकर मैंने अपने संदेह को सच्चा साबित करवा लिया । डाकू इस पर तंत्र का प्रयोग करने के पहले मैंने उसे उपदेश दिया कि तुम मेरे धन के लोभ में मत पड़ो । पर उसने नहीं सुना, तब दण्ड का प्रयोग करना पड़ा । एक डाकू को अपने वश में करने के लिए जब इतना सारा तंत्र करना पड़ा तब सौ कौरवों को तथा उनकी मदद करनेवाले सैकड़ों महान वीरों और सेनाओं को हराने के लिए श्रीकृष्ण को न मालूम कितने तंत्र करने पड़े थे?" ये बातें सुनने पर आदित्य का ज्ञानोदय हुआ।

सूर्यवंश में रामचन्द्रजी के बहुत समय पूर्व त्रिशंकु नामक एक राजा हुए, उन्होंने काफी समय तक राज्य किया। विश्वामित्र ने उन्हें शरीर के साथ स्वर्ग में भेजने का आश्वासन दिया था। पर उन्हें भेज न पाये, तो उनके वास्ते त्रिशंकु स्वर्ग की सृष्टि की।

इन्हीं त्रिशंकु राजा के हरिश्चन्द्र नामक एक पुत्र थे। राजा हरिश्चन्द्र के जब बहुत समय तक कोई संतान न हुई तो उन्होंने मनौती की कि उन्हें संतान होगी तो वे वरुण देवता के वास्ते नर बलि चढ़ायेंगे। इसके बाद उनकी पत्नी गर्भवती हो गई और एक पुत्र का भी जन्म दिया। हरिश्चन्द्र ने बच्चे के नामकरण के दिन बड़ा उत्सव मनाया और ब्राह्मणों में स्वर्णदान और गोदान किये।

उस समय वरुण भी ब्राह्मण के रूप में आये, दान स्वीकार करके पूछा—"तुमने मुझे तुम्हारे पुत्र की बलि देने का वचन दिया था, अब अपने वचन का पालन करो।"

"महात्मा, एक महीने तक मेरी पत्नी के वास्ते प्रसूति की मैल बनी रहेगी न? तब तक आप रुक क्यों नहीं जाते?" हरिश्चन्द्र ने कहा।

वरुण हरिश्चन्द्र की बात मानकर चले गये। फिर एक महीने बाद आ धमके। हरिश्चन्द्र ने अतिथि-सत्कार करने के बाद पूछा—"महानुभाव, आज्ञा दीजिए, आप किस काम से आये हैं?"

१९. हरिश्चंद्र की कहानी

इसके बाद हरिश्चन्द्र ने अपने पुत्र का 'लोहिताक्ष' नामकरण किया और उसे खूब पढ़ाया। जब उस बालक को मालूम हुआ कि बलि-पशु के रूप में कभी न कभी उसकी मौत निश्चित है, वह घर से भाग गया और एक पहाड़ी गुफा में छिप गया। क्योंकि उसकी क़िस्मत में बहुत दिन तक ज़िंदा रहना था।

उन्हीं दिनों में वरुण ने आकर नरमेध करने की याद दिलाई। हरिश्चन्द्र ने कहा-"महानुभाव, मैं क्या कर सकता हूं? मेरा पुत्र घर से भाग गया है।"

"तुमने झूठ बोलकर मुझे दगा दिया, इसलिए तुम जलोदर नामक बीमारी के शिकार हो जाओ।" यों वरुण ने हरिश्चन्द्र को शाप दिया।

शाप पाकर एक ओर हरिश्चन्द्र दुखी थे तो दूसरी ओर अपने पुत्र के वास्ते भी परेशान रहने लगे। उस हालत में गुप्त रूप से गुफा में जीनेवाले लोहिताक्ष को एक यात्री ने देखा और उसने समझाया-"तुम्हारे वास्ते तुम्हारे पिता तड़प रहे हैं, लेकिन तुम बेखबर हो। क्या दुनिया में कोई ऐसा भी बेटा हो सकता है?"

यात्री की फटकार सुनकर लोहिताक्ष दुखी हुआ और अपने पिता को देखने चल पड़ा। ठीक उसी वक़्त इन्द्र एक

वरुण ने अपन आने का कारण बताया।

"यह तो छोटा शिशु है। यज्ञ-पशु के रूप में काम नहीं दे सकता, इसलिए आप इसके उपनयन होने तक ठहर जाइयेगा।" हरिश्चन्द्र ने समझाया।

इस पर वरुण ने क्रोध में आकर कहा-"तुम अपने पुत्र के प्रति प्रेम के कारण ये सारे बहाने बनाते हो, क्या मैं तुम्हारे मन की बात भांप नहीं सकता? फिर भी इस बार मैं तुम्हारी बात मान लेता हूं। तुम्हारे पुत्र का उपनयन संस्कार होने के बाद लौट आऊंगा। उस वक़्त अगर अपने वचन का पालन न करेंगे तो मैं जरूर तुम्हें शाप दूंगा।"

ब्राह्मण के वेष में आ पहुँचा, दया दिखाने के स्वर में समझाया–"तुम नाहक़ अपने पिता के पास जाकर अपने प्राण क्यों खो बैठते हो? मेरी बात सुनो, तुम्हारे पिता अपने रोग की पीड़ा से मुक्त होने के लिए तुम्हारी बलि चढ़ानेवाले हैं। तुम्हारे पैदा होने के पहले ही तुम्हारे पिता ने वरुण को इस बात का वचन भी दे रखा है।"

अपने पिता को रोग से पीड़ित जानकर लोहिताक्ष अपने घर की ओर चल पड़ता और इन्द्र उसके निर्णय को बदल देते।

एक दिन हरिश्चन्द्र अपने कुलगुरु वसिष्ठ से बोले–"गुरुदेव, मैं जलोदर से पीड़ित हूँ। कृपया मुझे इस पीड़ा से किसी तरह मुक्त कीजिएगा।"

वसिष्ठ ने समझाया–"इसके वास्ते केवल एक ही उपाय है। वैसे पुत्र तेरह प्रकार के होते हैं। उनमें क्रीत (धन देकर खरीदा गया) पुत्र एक होता है। इसलिए तुम किसी के पुत्र को खरीद लो, उसे बलि-पशु के रूप में रखकर यज्ञ करो और इस व्याधि से मुक्त हो जाओ।"

यह बात सुनकर हरिश्चन्द्र ने अपने मंत्रियों को बुलवाकर कहा–"अगर कोई ब्राह्मण अपने पुत्र को बेचना चाहे तो वह जितने भी धन की माँग करे, देकर उसे संतुष्ट करो और उस युवक को ले आओ।"
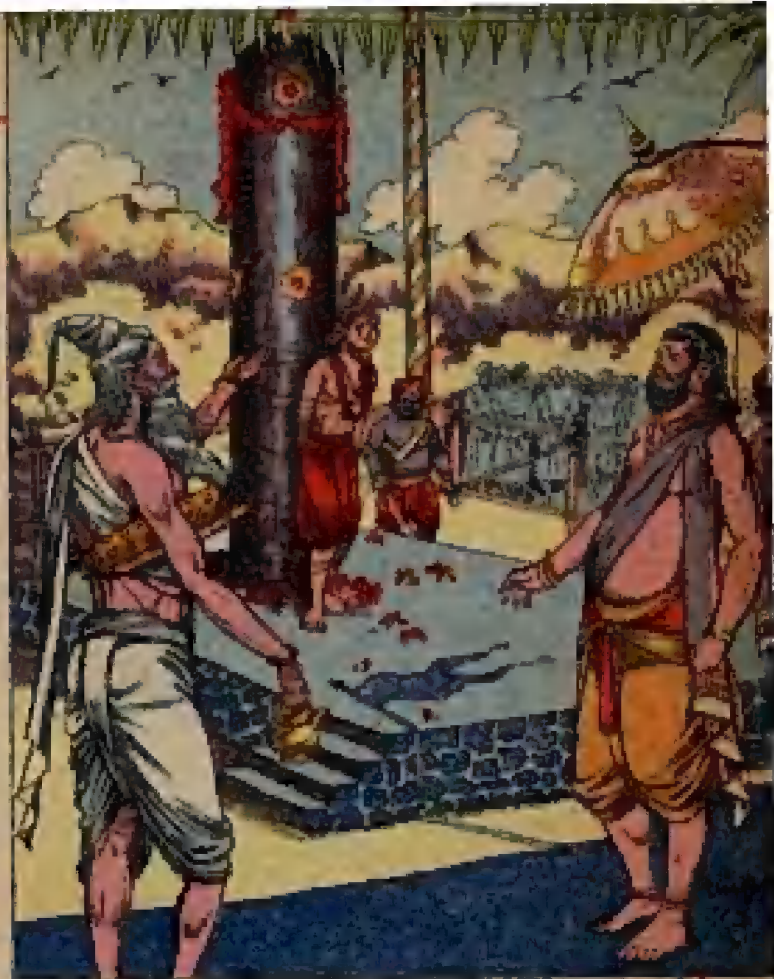
मंत्रियों ने कई गाँव छान डाले, आखिर अजीगर्त नामक दरिद्र ब्राह्मण ने अपने मंझले पुत्र शुनश्शेप को बेच डाला, इस पर उसे मुँह माँगा धन देकर खरीद लिया।

नरबलि के वास्ते युवक को पाकर हरिश्चन्द्र प्रसन्न हुए, यज्ञ के लिए सारी सामग्री इकट्ठी की, ऋत्विकों को नियुक्त कर यज्ञ प्रारंभ किया। शुनश्शेप को यूप स्तम्भ से बांध दिया गया। वह ज़ोर-शोर से जब रोने लगा, तब विश्वामित्र को उस पर दया आ गई और उन्होंने हरिश्चन्द्र को समझाया–"राजन, इस ब्राह्मण बालक का वध क्यों करते हैं? छोड़ दीजिए। प्राचीन काल में आप के वंश के राजा

इस प्रकार शुनश्शेप को बचाने में विश्वामित्र ने बड़ी सहायता की, लेकिन हरिश्चन्द्र ने उनकी बात नहीं मानी थी, इस बात को विश्वामित्र भूल नहीं पाये ।

एक दिन हरिश्चन्द्र कौशिकी नदी के तट पर शिकार खेलने गये और वे एक जंगली सुअर का पीछा कर रहे थे, तब विश्वामित्र एक बूढ़े ब्राह्मण के वेष में पहुँचे, हरिश्चन्द्र को धोखा देकर उनके राज्य के साथ उनके सर्वस्व को ले लिया ।

इसके बाद एक दिन वसिष्ठ ने विश्वामित्र से मुलाक़ात होने पर उन्हें डांट दिया— "तुम कैसे पापी हो? मेरे यजमान हरिश्चन्द्र को अकारण धोखा देकर उन्हें वनवासी बना दिया है । तुम तापसियों में अत्यंत नीच व्यक्ति हो! तुम्हारा तप बक ध्यान है, इसलिए तुम बक बन जाओ ।" यों उन्हें शाप दे दिया ।

इस पर विश्वामित्र ने क्रुद्ध होकर वसिष्ठ को भी शाप दे डाला—"अच्छी बात है, पर मैं जब तक बक बना रहूँगा, तब तक तुम बगुला बने रहो ।"

उस दिन से वे दोनों पक्षियों का रूप धरकर मानस सरोवर के किनारे के वृक्षों पर निवास करते रोज लड़ते रहें और एक दूसरे को घायल बनाते रहें । चाहे

दूसरों के वास्ते अपने प्राण तक दे बैठते थे । ऐसी हालत में क्या आप अपनी बीमारी दूर करने के लिए दूसरों का प्राण लेते हैं? मैं आप की पीड़ा दूर करता हूँ । इस युवक को छोड़ दीजिए ।"

यों विश्वामित्र ने हरिश्चन्द्र को समझाया, पर वे शुनश्शेप को छोड़ने के लिए तैयार न हुए । इस पर विश्वामित्र ने वरुणदेव को संतुष्ट करने के लिए शुनश्शेप को मंत्र का उपदेश दिया ।

शुनश्शेप ने उस मंत्र का जाप किया । वरुणदेव अत्यंत प्रसन्न हो उठे, वे उसी समय आ पहुँचे, युवक को मुक्त कराया, हरिश्चन्द्र की पीड़ा दूर करके चले गये ।

वे बड़े महर्षि क्यों न हों, उनके भीतर अहंकार बना ही रहा।

इस प्रकार उन दोनों को परस्पर लड़ते देख ब्रह्मा ने प्रवेश करके दोनों को शापों से मुक्त किया और उन्हें अपने आश्रमों में भेज दिया। इस घटना के बाद भी वसिष्ठ ने निमि को शाप देकर उनके द्वारा शाप पाया। यह घटना यों हुई: इक्ष्वाकु के पुत्र निमि धर्मात्मा और सच्चरित्र थे। उन्होंने ब्राह्मणों के वास्ते गौतम मुनि के आश्रम के समीप समस्त प्रकार की सुविधाओं से पूर्ण जयंतपुर नामक नगर बसाया।

इसके थोड़े दिन बाद निमि के मन में दीर्घकाल याग करने की इच्छा पैदा हुई। उन्होंने अपने पिता की अनुमति प्राप्त कर महा मुनियों के कहे अनुसार आवश्यक सामग्री इकट्ठी कर ली। तब भृगु, अंगीरस, गौतम, पुलस्त्य, ऋचीक, पुलह जैसे यज्ञ के प्रवीणों को निमंत्रित किया, अपने कुलगुरु वसिष्ठ से निवेदन किया– "महानुभाव, मैंने महादेवी के बारे में पाँच हज़ार वर्षोंवाला यज्ञ करने का निश्चय कर लिया है और उसके वास्ते आवश्यक साधन-सामग्री भी जुटा ली है, इसलिए आप मेरे द्वारा यह यज्ञ करवा दीजिए।"

इस पर वसिष्ठ ने जवाब दिया– "इन्द्र ने भी मेरे द्वारा जगदंबा का यज्ञ कराने का अनुरोध किया है। वह यज्ञ पाँच सौ वर्षों में ही पूरा हो जाएगा। उसे पूरा करने के बाद में आप से यह यज्ञ कराऊँगा। तब तक आप सब्र कीजिए।"

"महानुभाव, मैंने सारे मुनियों को निमंत्रण भिजवा दिया है, यज्ञ की सामग्री जुटा कर रखी है। आप तो हमारे सूर्यवंश के पुरोहित हैं, ऐसी हालत में उचित समय पर आप का ऐसा करना कहाँ तक न्याय संगत है? धन के लोभ में पड़कर क्या आप मेरे प्रति यों धोखा देते हैं?" यों निमि ने वसिष्ठ से पूछा।

फिर भी वसिष्ठ ने निमि की बातों पर ध्यान न दिया। इन्द्र के द्वारा यज्ञ

कराने के लिए चल दिये। इस पर निमि ने गौतम ऋषि को अपने ऋत्विज बनाकर महादेवी के प्रति सफलतापूर्वक यज्ञ संपन्न किया और सब को दिल खोलकर दक्षिणाएँ दीं।

इस बीच वसिष्ठ ने इन्द्र के द्वारा यज्ञ करवाया, बहुत सारी दक्षिणाएँ लेकर यज्ञ-दीक्षा में बैठे निमि को देखने आये। लेकिन उस समय निमि सो रहे थे, इस कारण वसिष्ठ को निमि के दर्शन करने का मौक़ा नहीं मिला।

इस पर वसिष्ठ ने क्रोध में आकर निमि को शाप दे दिया–"मैं तुम्हारा कुलगुरु हूँ, तुमने मेरी उपेक्षा करके यह पद किसी दूसरे को देकर यज्ञ संपन्न करना चाहा, साथ ही में तुम्हें देखने आया तो मेरी उपेक्षा की। इस अपराध में तुम्हारी देह नीचे गिर जाय। तुम विदेह बन जाओ। यही तुम्हारे लिए मेरा शाप है।"

यह शाप सुनकर निमि के सेवक घबरा गये और सब ने उन्हें नींद से जगाकर वसिष्ठ के शाप का परिचय दिया। निमि भी क्रोध में आये। उन्होंने भी वसिष्ठ को प्रतीकार के रूप में शाप दिया–"तुम ब्रह्मदेव के निकट रिश्तेदार हो, फिर भी पाप का भय तक किये बिना तुमने अकारण मुझे शाप दे दिया। धन के लोभ में पड़कर तुमने तुम्हारे शिष्य बने मुझे तिरस्कृत किया, धन के लोभ ने तुम्हें बेशर्म बनाया है। तुमने जो अपराध किया, उसका मुझ पर आरोप करना चाहते हो? तुमने मुझे शाप दिया, ऐसा क्रोध रखनेवाले तुम्हारे शरीर की भी मेरे शरीर की ही गति हो जाए!"

इस प्रकार दोनों के परस्पर शाप देने के बाद वसिष्ठ ब्रह्मा के पास पहुँचे और बोले–"भगवन, निमि नामक राजा ने मेरे शरीर के गिर जाने का शाप दे दिया है। आप मुझे कोई ऐसा उपाय बताइये जिससे मेरा ज्ञान किसी और शरीर में क़ायम रहे।"

इस पर ब्रह्मा ने सलाह दी–"तुम मित्रावरुण देहांश प्राप्त कर अपने ज्ञान की रक्षा कर लो।"

ब्रह्मा को प्रणाम करके वसिष्ठ वरुण लोक में पहुँचे, अपने शरीर को वहाँ पर छोड़ दिया और अपने प्राणों को मित्रा-वरुण मे प्रवेश कराया।

थोड़े दिन बाद वहाँ पर ऊर्वशी आई। मित्रावरुण उस पर मोहित हुए, उसके साथ थोड़े दिन सुखपूर्वक बिताये, इसके फल स्वरूप उन्हें ऊर्वशी के द्वारा अगस्त्य और वसिष्ठ पैदा हुए। अगस्त्य पैदा होते ही तपस्या करने जाने की अपनी इच्छा प्रकट की और वहाँ से चले गये। वसिष्ठ को इक्ष्वाकु ने अपने गुरु नियुक्त कर लिया।

उधर निमि ने भी अपने अंतिम प्राणों के साथ यज्ञ पूरा किया। यज्ञ भोक्ताओं ने उनके पास प्रवेश करके पूछा–"राजन, आप के यज्ञ से हम पूरे संतुष्ट हुए। आप की अगर कोई इच्छा हो तो बता दीजिए, हम अवश्य उसकी पूर्ति करेंगे। आप क्या नर देह चाहते हैं या सुर देह?"

इस पर निमि ने उनसे निवेदन किया–"महात्माओ, जब तक यह शरीर है, तब तक इस शरीर के लिए खतरा बना रहता है, मैं किसी प्रकार का शरीर नहीं चाहता, इसलिए मुझे वायु रूप प्रदान कीजिए।"

"राजन, आप की कामना जगदंबा पूरी कर सकती है।" देवताओं ने निमि को बताया।

निमि के प्रार्थना करने पर उनके यज्ञ से संतुष्ट महादेवी प्रत्यक्ष हो गई और कहा–"समस्त भूतों की आँखों में तुम्हें निवास प्रदान करूँगी। तुम्हारे कारण प्राणियों को निमेष (पलक झपने) प्राप्त होगा।"

इसके बाद मुनियों ने निमि की देह का मंथन कर उसके भीतर से जनक की सृष्टि की। जनक विदेहवाले निमि के पुत्र हैं, इस कारण वे विदेहू कहलाये, मिथिला को राजधानी बनाकर गंगा के तट पर राज्य किया। उसी राज्य का नाम विदेह पड़ गया।

विचित्र विवाह

प्राचीन काल में पाटलीपुर में एक धनी ब्राह्मण रहा करता था, उसके केसट नामक एक पुत्र था। केसट असाधारण सुंदर था। युक्त वयस्क के होने पर उसके मन में शादी करने की इच्छा हुई। पर उसके योग्य कोई रूपवती कन्या उसे कहीं दिखाई न दी। इस पर तीर्थाटन करने का बहाना बताकर केसट अपने मां-बाप की अनुमति ले योग्य कन्या की खोज में चल पड़ा।

कई दिन की यात्रा के बाद केसट नर्मदा के तट पर पहुँचा। उस समय वहाँ पर बरात के लोग पहुँच चुके थे। उस भीड़ में से एक वृद्ध ब्राह्मण ने केसट को देखा, उसके रूप-सौंदर्य पर आकृष्ट हो उसके समीप जाकर बोला– "बेटा, मेरी एक मदद करो, मैं तुम्हारे इस उपकार को कभी भूल नहीं सकता।"

बूढ़े पर रहम खाकर केसट ने पूछा– "कहिये, मुझे क्या करना है?"

"मेरी यह जो मदद करोगे, इससे तुम्हारा कोई नुक़सान न होगा। तिस पर मेरी वंशलता को बचानेवाले साबित होगे।" बूढ़े ब्राह्मण ने कहा।

"बताइये, मुझे क्या करना होगा?" केसट ने फिर पूछा।

"नर्मदा के उस पार रत्नदत्त नामक एक ब्राह्मण है। उसके रूपवती नामक एक सुंदर कन्या है। मैं उस कन्या के साथ अपने पुत्र का विवाह करने जा रहा हूँ। मगर कन्या के परिवार के लोगों ने अभी तक मेरे बेटे को देखा नहीं है। तुम जितने सुंदर हो, मेरा बेटा उतना कुरूप है। उसे देखने पर रत्नदत्त अपनी बेटी देने को तैयार न होगा। इसलिए अगर तुम मेरे साथ चलोगे, मैं तुमको

अपना पुत्र बताऊँगा। तुमको वर बनायेंगे, कन्या के गले में तुम्हीं मंगल सूत्र बांध दो, शादी के बाद तुम अपने रास्ते आप चले जाओ। मैं अपनी बहू को लेकर अपने गाँव लौट जाऊँगा। तुम्हारी इस सहायता का मैं कुछ न कुछ तुम्हारा उपकार करूँगा।" ब्राह्मण ने समझाया।

बूढ़े की नीचता पर केसट चकित रह गया। मगर उसने पहले ही बूढ़े को वचन दिया था, इसलिए बूढ़े की इच्छा की उसे पूर्ति करनी पड़ी। इसके बाद वह भी बरातियों में शामिल हो गया, नावों पर नदी को पार करके उसी दिन शाम को कन्या के गाँव पहुँचे।

उस दिन शाम को केसट कालकृत्यों से निवृत्त होने के लिए नदी के किनारे पहुँचा; वहाँ पर एक राक्षस उसे पकड़कर खाने को हुआ। केसट ने उसे समझाया कि उसने एक ब्राह्मण की मदद करने का वचन दिया है, वह कार्य पूरा करके दूसरे दिन रात को वह जरूर लौट आएगा, तब उसे खाया जा सकता है।

राक्षस ने पूछा–"तुम अपने वचन का जरूर पालन करोगे न?"

"मैं अपने वचन का हमेशा पालन करता हूँ। इसीलिए तो उस दुष्ट ब्राह्मण की मदद करता हूँ।" केसट ने कहा।

"अच्छी बात है, तुम्हारी सचाई की परीक्षा लेते हैं।" राक्षस ने कहा।

इसके बाद केसट को वर बनाया गया, विवाह ठीक से संपन्न हुआ। उस रात को वर-वधू को एक कमरे में भेजा गया, मगर केसट ने रूपवती की ओर आँख उठाकर देखा तक नहीं; न उससे बात ही की। रूपवती यह सोचकर खुश हो गई थी कि ऐसा सुंदर युवक उसका पति बन गया है, पर यह सोचकर वह परेशान हो गई कि उसका पति न मालूम क्यों उस पर नाराज है? उसकी समझ में कुछ न आया, वह सोने का अभिनय करते आँखें बन्द कर लेटी रही।

आधी रात के करीब केसट ने देखा कि रूपवती गहरी नींद सो रही है, वह धीरे से उठकर कमरे से बाहर आया, नदी के किनारे स्थित राक्षस के पास चल पड़ा। उधर रूपवती केसट की गति-विधियों पर निगरानी रखती थी, वह भी उठ बैठी, घूंघट डाले केसट के पीछे उसका अनुसरण करते चलने लगी। केसट जब नदी के पास पहुँचा, तब राक्षस ने उसे देख पूछा–"हे युवक, तुमने अपने वचन का पालन किया है। ऐसे सत्य वचन बोलनेवाले तुम्हें खाकर मैं पवित्र बन जाऊँगा।"

उस दृश्य को देख रूपवती आगे आई, रोते हुए बोली–"महाशय, ये मेरे पति हैं, इन्हें छोड़ दीजिए!"

"मुझे बड़ी भूख लगी है। मैं इसे खा डालूंगा, तुम मुझे मत रोको।" राक्षस ने क्रोध में आकर कहा।

"अगर आप भूखे हैं तो मुझे खाकर इन्हें छोड़ दीजिए! ऐसा न होकर आप इन्हें खाकर मुझे अनाथ बनायेंगे तो मेरी हालत क्या होगी?" रूपवती ने पूछा।

"इसके लिए मैं क्या कर सकता हूँ? तुम कहीं जाकर भीख माँग लो।" राक्षस ने निर्दयतापूर्वक कहा।

"अनाथ बन जाऊंगी तो मुझे कौन भीख देगा?" रूपवती ने फिर पूछा।

"तुम्हारे मांगने पर कोई भिक्षा न देगा तो उसका सर फट जाएगा और वह

सवेरा होने के पहले ही वे दोनों घर लौट आये।

दूसरे दिन भोजन के बाद बराती वधू को साथ लेकर चल पड़े। दुष्ट बूढ़े ब्राह्मण का काम सफल हो चुका था, इसलिए उसने केसट के शरीर पर धारण किये गये सारे आभूषण व वस्त्र छीन लिये, अपने परिवार के लोगों को एक नाव पर चढ़ाकर केसट को दूसरी नाव पर सवार कराया। उस नाव के मल्लाहों को खूब धन देकर मझ धार में नाव को डुबो देने का आदेश दिया। आगे की नाव सुरक्षित रूप में किनारे जा लगी, मगर पीछेवाली नाव नदी के बीच डूब गई।

मल्लाह तैरना जानते थे, इसलिए तैरते हुए किनारे जा लगे।

नदी की धार तेज थी, इस कारण केसट की नाव डूबकर भी दूर तक बह गई। केसट किसी तरह से नाव से बाहर निकला और किनारे आ पहुँचा।

बूढ़े ब्राह्मण ने केसट के साथ जो दगा किया था, उससे ज्यादा दुःख उसे रूपवती के दूर हो जाने पर हुआ।

उधर बरातियों के साथ नदी पार करके रूपवती पैदल चली जा रही थी, तब रूपवती ने वृद्ध ब्राह्मण के पास जाकर विनय पूर्वक पूछा—"अजी, बाक़ी सभी

मर जाएगा। ठीक है न! अब जाओ।" राक्षस ने उसे वर दे दिया।

"तब तो मैं आप ही से मांगती हूँ। मुझे पति-भिक्षा दे दीजिए।" रूपवती ने पूछा।

उसे देख राक्षस को बड़ा आनंद आया। वह बोला—"लो, यह तुम्हारा पति है। तुम इसके योग्य पत्नी हो। तुम दोनों चिरकाल तक सुखी बने रहो।" यों उन्हें आशीर्वाद देकर राक्षस अंधेरे में कहीं चला गया।

रूपवती की पति-भक्ति पर केसट को अत्यंत आनंद हुआ। फिर भी उसने रूपवती को असली बात नहीं बताई,

लोग पैदल चले आ रहे हैं, लेकिन वे तो कहीं दिखाई नहीं देते?"

"तुम्हारे पति की बात पूछती हो न? लो, यही है।" इन शब्दों के साथ ब्राह्मण ने रूपवती को अपने कुरूपी पुत्र को दिखाया। इसपर रूपवती को असहनीय दुःख और क्रोध भी आया। उसने गरजकर पूछा—"मेरे पति ये ही हैं? मैं राजा से पूछकर ही इसका फ़ैसला करूँगी।"

ये बातें सुनने पर बूढ़े ब्राह्मण को डर लगा कि वधू के ऐसा करने पर राजा निश्चय ही बूढ़े ब्राह्मण का सर कटवा देंगे, इसलिए उसी वक़्त उस युवती को उसके पिता के पास भेजकर वह अपने परिवार के साथ अपने गाँव पहुँचा।

रूपवती अपने पिता के घर तो पहुँची, लेकिन उसे जरा भी इस बात का संतोष न रहा। वह दिन-रात अपने पति के वास्ते दुःखी रहने लगी। उसे इस बात का डर भी सताने लगा कि उसका पति जीवित है या नहीं? कहीं दुष्ट ब्राह्मण ने उसके पति की कोई हानि पहुँचा दी हो।

इस बीच प्राणों के साथ बचकर प्रवाह से बाहर आनेवाला केसट सोचने लगा कि रूपवती के साथ जो अन्याय हुआ है, उसका परिचय रूपवती के पिता रत्नदत्त को कराकर उसे भी इस बात का प्रायश्चित्त करना चाहिए, क्यों कि उस नाटक में उसका भी छोटा-मोटा पात्र था, यों विचार कर वह पैदल ही रूपवती के पिता के घर पहुँचा।

वहाँ पर केसट ने रूपवती को देखा, उसके आश्चर्य की कोई सीमा न थी। रूपवती भी खुशी के मारे फूली न समाई। केसट के साथ उस घर में ऐसा आदर-सत्कार हुआ जैसे एक दामाद के साथ होते हैं।

इसके बाद थोड़े दिन ससुराल में बिताकर केसट रूपवती को साथ ले पाटलीपुर को लौट गया। वहाँ पर अनेक वर्षों तक उन लोगों ने सुख पूर्वक अपना जीवन बिताया।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जुलाई १९८० के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

★

A. K. Chatterjee S. Paramasivan

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों ।

★ मई १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा ।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा ।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसम न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

मार्च के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : मेरे जीवन का साधन !

द्वितीय फोटो : बना दूसरे का बंधन !!

प्रेषक : विपुलमंगल, ५२/५९ प्रभात रोड, करोल बाग, नई दिल्ली-५

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी ।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे। आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

स्वयंवर

राम नौकर के वेश में दुर्गादेवी के घर पहुँच गया। चूँकि वह सारे काम चुस्ती के साथ तुरत-फुरत कर देता था अतः दुर्गादेवी उस पर ही अधिक निर्भर रहने लगी। साथ ही उसके भोलेपन और सच्चाई ने शांति के हृदय में घर कर लिया।

समय आ ही गया और उसने दुर्गादेवी को चुनौती दे दी: शांति का विवाह मुझसे करो वरना मैं चला।

दुर्गादेवी के लिए शांति नौकरानी से अधिक तो थी नहीं, अतः उसने विवाह की हामी भर दी। उसे लगा कि इसमें उसका अपना ही हित है।

इस बीच बीच लक्ष्मण पूरी शान-शौकत के साथ शहर में आ पहुँचा। अफ़वाह फैल गई कि वह राजकुमार है। उसके खुले हाथ और मोहक व्यक्तित्व ने रूपा पर जादू सा डाल दिया। अभिमानिनी दुर्गादेवी को भी अपनी लाडली बेटी के लिए लक्ष्मण से उपयुक्त वर कहाँ मिल सकता था। मक्खनलाल ने आगापीछा किया। पर उसकी एक न चली। धूमधाम के साथ विवाह सम्पन्न हो गया।

दोनों भाइयों का उद्देश्य तो पूरा हो चुका था, तो क्या वे अपना असली रूप प्रकट कर दें? अभी नहीं। लक्ष्मण के आगे तो कम से कम एक चुनौती थी ही। सिरचढ़ी रूपा को जीवन की वास्तविकता से परिचित कराना जरूरी था। उसको प्रेम की अग्निपरीक्षा में खरा उतरना था।

(क्रमशः)
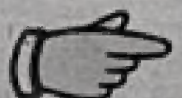
नन्हे मुन्ने
प्यार चाहते, प्यार मिले तो बढ़ते जाते
प्यार का उपहार
पारले ग्लुको—
स्वाद में निराले
शक्ति से भरपूर
दूध, गेहूं, शक्कर और ग्लूकोज़ के
स्वाद और पौष्टिक गुणों से भरपूर.
PARLE
Gluco
BISCUITS
पारले
ग्लुको
भारत के सबसे ज़्यादा बिकनेवाले बिस्किट.
वर्ल्ड सिलेक्शन
पारितोषिक विजेता
everest/79/PP/159-hn